विद्यार्थियों
की
दिनचर्या
स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती

विषय-सूची

॥ ओ३म् ॥

विद्यार्थियों की दिनचर्या

आज भारतवर्ष को हृष्ट-पुष्ट और बलिष्ठ युवकों की परम आवश्यकता है। आज राष्ट्र को आवश्यकता है ऐसे युवक और युवतियों की जिनके हृदय में देशभक्ति की भावना हो, जो अपने राष्ट्र के लिए अपने जीवन का बलिदान करने को उद्यत हों। आवश्यकता है ऐसे विद्यार्थियों की जो सदाचारी, चरित्रवान्, संयमी, जितेन्द्रिय, मेधावी और आत्मवान् हों।

स्वामी विवेकानन्द जी के शब्दों में–

"हमारे देश के लिए इस समय आवश्यकता है, लोहे की तरह ठोस मांस-पेशियों और मजबूत स्नायुवाले शरीरों की। आवश्यकता है इस तरह से दृढ़ इच्छा-शक्ति-सम्पन्न होने की कि कोई उसका प्रतिरोध करने में समर्थ न हो। आवश्यकता है ऐसी अदम्य इच्छा-शक्ति की जो इस ब्रह्माण्ड के सारे रहस्यों को भेद सकती हो। मैं जो चाहता हूँ वह है–बल, पुरुषार्थ, क्षात्रवीर्य और ब्रह्मतेज।"

देश के युवक-युवतियों और विद्यार्थियों को बलवान्, मेधावी, बुद्धिमान् और विद्वान बनाने के लिए इस पुस्तक में हम प्रातः जागरण से लेकर शयन-पर्यन्त विद्यार्थियों की समस्त दिनचर्या पर विचार करेंगे। जो युवक और युवतियाँ, छात्र और छात्राएँ इस दिनचर्या का पालन करेंगे, वे न केवल सौ वर्ष की आयु ही प्राप्त करेंगे अपितु इससे भी अधिक आयु प्राप्त कर अदीन रहते हुए अपनी जीवन-

यात्रा को सुखपूर्वक सफल बनाने में समर्थ होंगे।

प्रातः जागरण

हमारी दिनचर्या का आरम्भ प्रातः ब्राह्ममुहूर्त में जागने से होता है। आयुर्वेद के ग्रन्थों में कहा है–

ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत स्वस्थो रक्षार्थमायुषः।

(भावप्रकाश १।४)

स्वस्थ व्यक्ति को अपनी जीवन-रक्षा के लिए प्रातः काल ब्राह्ममुहूर्त में ही उठ जाना चाहिए।

महर्षि मनु का आदेश है–

ब्राह्मे मुहूर्ते बुध्येत धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत्।
कायक्लेशांश्च तन्मूलान्वेदतत्त्वार्थमेव च॥

(मनु० ४।९२)

प्रत्येक व्यक्ति को ब्राह्ममुहूर्त में उठकर धर्म और अर्थ का चिन्तन करना चाहिए। शरीर के रोग और उनके कारणों का विचार करना चाहिए। फिर वेद के रहस्यों का भी चिन्तन करना चाहिए।

परन्तु आज युवक प्रातःकाल नहीं उठते। वे कहते हैं 'मनुस्मृति' अब आउट-ऑफ-डेट (पुरानी) हो गई है। अब तो टुडे (Today)-स्मृति के अनुसार कार्य होना चाहिए।

सूर्यातपेऽवबुध्येत बीड़ीं टीं चानुचिन्तयेत्।
दम्भं छलं परद्रोहं कलितत्त्वार्थमेव च॥

जब सूर्य पर्याप्त चढ़ जाए, खूब धूप निकल आए तब उठना चाहिए। उठते ही बीड़ी, सिगरेट और टी का चिन्तन करना चाहिए। दूसरों के साथ छल, ईर्ष्या और कुटिलता किस प्रकार करनी चाहिए–कलियुग के इन तत्त्वों का चिन्तन करना चाहिए।

युवको! सावधान! यह मार्ग कल्याण का मार्ग नहीं है। इस मार्ग पर चलकर पतन अवश्यम्भावी है। वेद कहता है–

मैतं पन्थामनुगा भीम एषः। (अथर्व० ८।१।१)

इस मार्ग पर मत चल, यह मार्ग बहुत भयंकर है।

देश के भावी कर्णधारो! रुको, लौटो! अपने प्राचीन ऋषियों और महर्षियों के मार्ग का अनुसरण करो।

प्रातः ब्राह्ममुहूर्त में उठो। चार बजे शय्या अवश्य छोड़ दो। चौबीस घण्टों में ब्राह्ममुहूर्त ही सर्वश्रेष्ठ है, इसे आलस्य और निद्रा में नष्ट मत करो। मानव-जीवन बड़े भाग्य से मिलता है। सन्त तुलसीदास जी ने कहा है–

बड़े भाग मानुष तनु पावा।
सुर दुर्लभ सब ग्रन्थन्हि गावा॥

हमारा एक-एक श्वास जीवन की इकाई है। इसको व्यर्थ मत जाने दो।

प्रत्येक प्रभात मानव-जीवन का आरम्भ-काल है। इस बेला में जीवन के उत्थान और निर्माण का, आगे बढ़ने का कुछ करके दिखाने और बनकर दिखाने का स्फूर्तिदायक सन्देश मिलता है। जो आलस्य और प्रमाद में पड़े रहकर इस सन्देश को नहीं सुन पाते, उन विद्यार्थियों का जीवन पिछड़ा ही समझो। जो विद्यार्थी जीवन के आरम्भ में ही अपने साथियों से पिछड़ गया, वह भविष्य में आगे बढ़ेगा, इसकी क्या आशा?

प्रिय युवको! कभी निहारिए! प्रातःकाल का वातावरण कैसा अद्भुत, सुन्दर एवं माधुर्ययुक्त होता है। प्रभात-वेला में कमल खिल उठते हैं। पक्षी चहचहाने लगते हैं। मृदुल समीर मन्दगति से बहने लगता है। समस्त सृष्टि में एक नवजीवन, नवचेतना और स्फूर्ति दृष्टिगोचर होती है।

पशु और पक्षी, जो प्राकृतिक जीवन व्यतीत करते हैं, वे सब ब्राह्ममुहूर्त में जग जाते हैं। यही कारण है उन्हें कभी कोई रोग नहीं होता, कोई बीमारी उनके पास नहीं फटकती। किसी पशु को न कभी बुखार आता है और न जुकाम होता है।

ब्राह्ममुहूर्त में चन्द्रमा की छटा कुछ अद्भुत और निराली होती है। चन्द्रमा की किरणों में अमृत होता है, इसीलिए तो इसे सुधाकर कहते हैं। चन्द्रमा की किरणें जहाँ वनस्पतियों को सोम प्रदान कर उनका पोषण करती हैं, वहाँ वे मनुष्य के शरीर को भी पुष्ट करती हैं। प्रातःकाल की वायु में अमृतकण होने के कारण वह मधुर, मृदु और जीवनप्रद होती है। इस वायु में अमृतकण होने के कारण रोग नष्ट हो जाते हैं। जिन रोगियों को रात-भर निद्रा नहीं आती, ब्राह्ममुहूर्त में जागने वालों का यह रोग सहज ही कुछ कम हो जाता है। इसीलिए इसे अमृतवेला कहते हैं। स्वस्थ्य और दीर्घ-जीवन के इच्छुक प्रत्येक युवक और युवती को ब्राह्ममुहूर्त में अवश्य ही उठ जाना चाहिए।

शारीरिक स्वास्थ्य, मन, बुद्धि और आत्मा सभी की दृष्टि से ब्राह्ममुहूर्त में उठना परम-उपयुक्त है। इस समय प्रकृति मुक्तहस्त से स्वास्थ्य, प्रसन्नता और मेधा-बुद्धि की वर्षा करती है। किसी कवि ने क्या खूब कहा है—

हर रात के पिछले पहरे में,
इक दौलत लुटती रहती है।
जो सोवत है सो खोवत है,
जो जागत है सो पावत है॥

इस समय बहने वाली वायु मनुष्य-शरीर में तेज, बल और संजीवनी शक्ति का संचार करती है। जो लोग प्रातः

उठकर इस वायु का सेवन करते हैं, उनका स्वास्थ्य उत्तम हो जाता है और आयु दीर्घ होती है। वेद में कहा है–

प्राता रत्नं प्रातरित्वा दधाति। (ऋ० १।१२५।१)

प्रातः उठने वाला रत्नों को धारण करता है।

प्रातःकाल का वर्णन करते हुए श्री थोरो महोदय लिखते हैं–

The Vedas say, "All intelligences awake with the morning."

अर्थात् वेद कहते हैं कि तमाम बुद्धियाँ प्रातःकाल के साथ ही जागरित होती हैं।

आयुर्वेद के ग्रन्थों में भी कहा है–

वर्ण कीर्ति मतिं लक्ष्मीं स्वास्थ्यमायुश्च विन्दति।
ब्राह्मेमुहूर्ते संजाग्राच्छ्रियं वा पंकजं यथा।।

(भै०सार० ९३)

अर्थात् प्रातःकाल उठने से सौन्दर्य, यश, बुद्धि, धन-धान्य, स्वास्थ्य और दीर्घायु की प्राप्ति होती है। शरीर कमल के समान खिल जाता है।

महर्षि दयानन्द लिखते हैं–

"मनुष्यों को प्रति रात्रि के चौथे प्रहर में आलस्य छोड़कर, फुर्ती से उठकर, अज्ञान और दरिद्रता के नाश के लिए प्रयत्न वाले होकर तथा परमेश्वर के ज्ञान और संसारी पदार्थों से उपकार लेने के लिए उत्तम उपाय सदा करना चाहिए।" (ऋ० १।६।३ का भावार्थ)

एक कवि ने भी क्या सुन्दर कहा है–

सवेरे ही उट्ठेगा जो आदमी।
रहेगा वो हर वक्त हंसी और खुशी।।

न आएगी सुस्ती कभी नाम को।
खुशी से करेगा हर इक काम को॥
सुबह का यह वक्त और ठण्डी हवा।
यह है सौ दवाओं से बेहतर दवा॥

सचमुच इस समय की वायु औषधि से भी बढ़कर काम करती है–

खुली साफ बेरोक हवा में।
जो गुण है वह नहीं दवा में॥

अतः शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति के इच्छुक विद्यार्थियों को ब्राह्ममुहूर्त में अवश्य उठ जाना चाहिए। इस समय कठिन–से–कठिन विषय सरलता से समझ में आ जाता है। प्रातःकाल याद किया हुआ पाठ शीघ्र स्मरण हो जाता है और बहुत समय तक नहीं भूलता।

भारत की भावी आशाओ! क्या आप महान् बनना चाहते हैं? यदि आपका उत्तर 'हाँ में है तो आज से ही प्रातः जागने का संकल्प लो। प्रातः उठना और महान् बनना, इन दोनों का घनिष्ठ सम्बन्ध है। संसार में जितने भी महापुरुष हुऐ हैं, वे सब ब्राह्ममुहूर्त में ही उठा करते थे।

क्या आप निरोग और स्वस्थ रहना चाहते हैं? क्या आप दीर्घायु प्राप्त करना चाहते हैं? क्या आप अकाल–मृत्यु को परे धकेलना चाहते हैं? यदि हाँ, तो प्रातः उठने का अभ्यास डालिए। प्रातःकाल उठने का एक अमोध उपाय यह है कि सोने से पूर्व अपने मन को आदेश दे दो कि प्रातः अमुक समय पर उठना है। आपका मन आपको निश्चित रूप से उसी समय जगा देगा। यदि आपने आलस्य नहीं किया तो आप बिना अलार्म की सहायता के स्वयमेव प्रातः उठने लग जाएँगे।

ईश-चिन्तन तथा माता-पिता की पूजा

प्रातः उठते ही—

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हवेम।।

(ऋ० ७।४१।१)

इत्यादि[१] वेदमन्त्रों से ईश्वर-चिन्तन कीजिए तथा प्रभु से धन, बल-मेधा एवं बुद्धि की प्रार्थना कीजिए और ऐसा संकल्प कीजिए—

"मेरे आज के जीवन के सम्पूर्ण कार्य परम पिता परमात्मा के लिए ही होंगे। मैं अपनी किसी भी क्रिया, विचार अथवा चेष्टा से किसी भी प्राणी को कष्ट नहीं पहुँचाऊँगा। मैं चाहे कैसी भी परिस्थिति में क्यों न होऊँ, परन्तु अपने मन और मस्तिष्क में काम, क्रोध,लोभ, मोह, ईर्ष्या और द्वेष तथा चिन्ता के भावों को प्रविष्ट न होने दूंगा। मैं अपने मन के ऊपर चौकीदार बनकर खड़ा रहूँगा और किसी भी दुष्ट संकल्प को, किसी भी दुश्चिन्ता को मन के भीतर न घुसने दूँगा। जब बुरे विचार मेरे मन में प्रवेश करने लगेंगे तो मैं उन्हें फटकारते हुए कहूँगा—

परो पेहिऽ मनस्पाप किमशस्तानि शंससि।
परेहि न त्वा कामये वृक्षान् वनानि संचर गृहेषु गोषु से मनः।। (अथर्व० ६।४५।१)

---

१. ये पाँच मन्त्र हैं। महर्षि दयानन्द ने शय्या त्यागने के पश्चात् इन मन्त्रों से प्रार्थना करने का आदेश दिया है। इन मन्त्रों के भाव बहुत ही गम्भीर और उच्च हैं। इनमें क्या भाव हैं इसके लिए लेखक की पुस्तक 'प्रार्थनालोक' का अवलोकन कीजिये।

ऐ मेरे मन के दुष्ट विचारो! ओ पाप की भावनाओ! दूर हट जाओ। तुम मुझे गन्दा परामर्श क्यों देते हो? तुम मुझे कुपथ पर क्यों चलाना चाहते हो? दूर भाग जाओ। मैं तुम्हारी कामना नहीं करता। तुम वनों और वृक्षों में जाकर विचरो। मेरा मन तो इन्द्रियों की देखभाल और घर के कार्यों में लगा हुआ है।

इस प्रकार अपने जीवन का प्रतिक्षण निरीक्षण करता हुआ मैं कल की अपेक्षा आज अधिक शान्त, मधुर और पवित्र बनूँगा। मैं निरन्तर अपने ध्येय की ओर तीव्र गति से आगे ही आगे बढ़ूँगा।"

प्रभु-आराधन और दिव्य आत्म-संकल्प के पश्चात् अपने माता, पिता, वृद्धों और भाई-बन्धुओं को नमस्ते कीजिए। इसका फल क्या होगा, यह महर्षि मनु के शब्दों में सुनिए—

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्यायशोबलम्॥

(मनु० २।१२१)

जो बड़ों की सेवा करते हैं और उनको नमस्कार करते हैं उनकी आयु, विद्या, यश और बल—ये चार पदार्थ बढ़ते हैं। अतः ईश्वर-वन्दना और शिवसंकल्प के पश्चात् माता-पिता आदि के चरण छूकर उन्हें नमस्ते कीजिए।

उषःपान

प्रातःकाल उठकर ईश्वर-चिन्तन, आत्म-सम्बोधन तथा नमस्कार आदि के पश्चात् उषःपान करने का विधान आयुर्वेद के ग्रन्थों में आता है। उषःपान शौच जाने से पूर्व करना चाहिए। दुर्भाग्य से भारतवर्ष में भी विदेशों की भाँति Bed Tea अर्थात् प्रातःकालीन चाय-पान की आदत बढ़ती जा रही है। यह भारत की जलवायु

के सर्वथा प्रतिकूल है। भारत शीतप्रधान देश नहीं है जहां प्रातः ही चाय-पान द्वारा पाचन संस्थान तथा स्नायुओं को उत्तेजना देने की आवश्यकता पड़े। अतः यहां तो उषःपान ही करना चाहिए।

जल की प्रशंसा करते हुए पाश्चात्य विद्वान् थोरो ने अति उत्तम विचार व्यक्त किए हैं। वे लिखते हैं—

"मेरा विश्वास है कि बुद्धिमान आदमियों के लिए एक ही पेय-पदार्थ सर्वोत्तम है, यानि शुद्ध जल। शराब उतनी बढ़िया चीज नहीं है जितना पानी; और गर्म कॉफी पीकर प्रभात की अथवा गर्म चाय पीकर सन्ध्या की आशाओं को चकनाचूर करने के विषय में कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं। जब क़भी मैं कॉफी या चाय के प्रलोभन में फँस गया हूँ, उस समय मेरा वस्तुतः पतन ही हुआ है।"

'बेड-टी' के स्थान पर उषःपान कीजिए। ऋषियों ने इसकी बड़ी प्रशंसा की है। 'भावप्रकाश' में लिखा है—

सवितुः समुदयकाले प्रसृतीसलिलस्य पिबेदष्टौ।
रोगजरापरिमुक्तो जीवेद् वत्सरशतं साग्रम्॥

सूर्योदय के समय जो व्यक्ति प्रतिदिन आठ अञ्जलि जलपान करता है वह रोगों से मुक्त हो जाता है, बुढ़ापा उसके पास नहीं फटकता और वह सौ वर्ष से भी अधिक आयु प्राप्त करता है।

प्रातः उषःपान करने से मल खुलकर आता है। उत्साह की वृद्धि होती है। इस जलपान से वीर्य-सम्बन्धी रोग दूर हो जाते हैं। काम-विकार और शारीरिक उष्णता नष्ट होती है। उषःपान से बवासीर, उदररोग, कोष्ठबद्धता (कब्ज), कुष्ठ, मूत्र और धातु-रोग, सिरदर्द, नेत्रविकार, निर्बलता तथा वात-पित्त और कफ आदि से होने वाले

भयंकर-से-भयंकर रोग नष्ट हो जाते हैं।

यदि यह जल मुख की बजाय नासिका से पिया जाए तो सोने पर सुहागे का काम करता है। प्रतिदिन एक पाव जल लेकर उसे नासिका से पीना चाहिए। आरम्भ में कठिनाई होगी, छींकें आएँगी और हो सकता है आप एक छटाँक जल भी न पी सकें, परन्तु कुछ दिन के अभ्यास से आप बड़ी सरलता से नाक द्वारा जल पी सकेंगे। नासिका द्वारा जलपान के गुणों का वर्णन करते हुए आयुर्वेद के ग्रन्थों में लिखा है-

विगतघननिशीथे प्रातरुत्थाय नित्यम्,
पिबति खलु नरो यो घ्राणरन्ध्रेण वारि।
स भवति मतिपूर्णश्चक्षुषा ताक्ष्र्यतुल्यो,
वलिपलितविहीनः सर्वरोगैर्विमुक्तः॥

अर्थात् रात्रि का अन्धकार दूर हो जाने पर जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर नासिका द्वारा जलपान करता है, वह बुद्धिमान् बन जाता है। उसकी नेत्रज्योति गरुड़ के समान हो जाती है। उसके बाल असमय में ही श्वेत नहीं होते तथा वह सम्पूर्ण रोगों से सदा मुक्त रहता है।

नासिका द्वारा जलपान से सिर-दर्द, जुकाम-चाहे नया हो या पुराना, नजला, नकसीर चलना आदि रोग जड़मूल से दूर हो जाते हैं।

शीत ऋतु में यदि जल बहुत शीतल हो तो उसे थोड़ा गुन-गुना करके पान किया जा सकता है।

मल-त्याग

उषःपान के पश्चात् शौच जाना चाहिए। प्रायः लोग मल-विसर्जन को इतना महत्त्व नहीं देते जितना भोजन को। चाहे दिन-भर बकरी की भाँति चरते रहें, हर समय

कुछ-न-कुछ डाल कर पेट को खराब करते रहें, बस किसी प्रकार एक बार मलविसर्जन हो जाए तो वे इसे पर्याप्त समझते हैं। इस विषय में ऐसा प्रचलित है—"एक बार योगी, दो बार भोगी, तीन बार रोगी।" परन्तु यह धारणा अत्यन्त भ्रामक एवं निर्मूल है। योगी दिन-भर चरता नहीं रहता, उसका आहार नियमित और सूक्ष्म होता है।

प्रत्येक मनुष्य को दिन में दो बार शौच अवश्य ही जाना चाहिए—प्रातः ईश-चिन्तन आदि के पश्चात् और सायंकाल ५ या ६ बजे। आलस्य और प्रमाद को छोड़कर प्रातः सूर्योदय से पूर्व ही शौच से निवृत्त हो लेना चाहिए। सुश्रुत में लिखा है—

आयुष्यमुषसि प्रोक्तं मलादीनां विसर्जनम्।

प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व मलादि का त्याग करना दीर्घायु प्रदान करने वाला है।

शौच में बैठने की भारतीय विधि ही सर्वोत्तम है। दाहिने पैर पर जोर देकर बैठने से शौच खुलकर आता है। यदि मलत्याग के समय दाँतों को भींचकर बैठा जाए तो दन्त-रोग नहीं होते।

देहली, बम्बई आदि शहरों में शौच-गृहों में कहीं-कहीं शौचकूप (Water-closet) प्रयोग में लाए जाते हैं। इन पर कुर्सी के समान बैठकर मल-विसर्जन किया जाता है। यह विधि बहुत ही हानिकारक है। इससे हर्निया की बीमारी हो जाती है।

बहुत-से व्यक्ति किसी अन्य आवश्यक कार्य के कारण मल-मूत्र के वेगों को रोक लेते हैं। ऐसा करना शरीर के लिए बहुत हानिकर है। मल-मूत्र के वेगों को कभी भी नहीं रोकना चाहिए क्योंकि इन्हें रोकने से अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। महर्षि चरक ने कहा है—

न वेगान् धारयेद्धीमाञ्जातान्मूत्रपुरीषयोः।
(चरक० सूत्र० ७। ३)

बुद्धिमान् पुरुष को चाहिए कि मल-मूत्र के वेगों को न रोके। मलादि के वेगों को रोकने से भारीपन, सिर-दर्द आदि हो जाते हैं। नेत्र-ज्योति मन्द होती है।

जो लोग शहरों में रहते हैं, उन्हें तो मल-त्याग के लिए शौचालय में ही जाना पड़ता है; परन्तु जो विद्यार्थी ग्रामों में रहते हैं उन्हें खुले मैदानों में ग्राम से पर्याप्त दूर जंगलों में ही शौच के लिए जाना चाहिए। मार्ग में तथा खड़े होकर मल-मूत्र का त्याग नहीं करना चाहिए। जिधर की वायु चल रही हो, उधर मुँह करके बैठें। इस प्रकार बैठने से पाखाने की दुर्गन्ध नहीं आएगी। शौच जाते समय जोर मत लगाइए, क्योंकि जोर लगाने से कभी-कभी वीर्य निकल जाता है।

बहुत-से युवक कुसंग में पड़कर बीड़ी-सिगरेट पीना सीख जाते हैं तो अनेक युवकों को चाय की लत लगी हुई है। ऐसे व्यक्ति मलाशय में 'हीट' देकर शौच जाना पसन्द करते हैं। बीड़ी-सिगरेट पीने वाले पाखानों में बैठकर घण्टों बीड़ी और सिगरेट का दम लगाया करते हैं। ऊपर से मुख का व्यापार चलता है और नीचे से गुदा का, परन्तु फिर भी कब्ज पिण्ड नहीं छोड़ती। ऐसे विद्यार्थियों और व्यक्तियों को सर्वप्रथम बीड़ी-सिगरेट और चाय[1] का सेवन छोड़ देना चाहिए। ये सभी विष हैं।

कुछ लोगों को प्रातः शौच नहीं आता; यदि आता है तो पूर्ण रूप से निवृत्ति नहीं होती। उन्हें दो-तीन बार शौच के लिए जाना पड़ता है। नगरों में ऐसे व्यक्तियों

---

१. इस विषय में पढ़िए लेखक द्वारा लिखित 'चाय भयंकर विष'।

की पर्याप्त संख्या मिलती है। जिन लोगों को कब्ज रहती है, उन्हें कब्ज से बचने के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए–

जिन विद्यार्थियों को कब्ज रहती हो, उन्हें व्यायाम नित्यप्रति नियमपूर्वक करना चाहिए। आँतों को ठीक रखने के लिए योगासन बहुत लाभदायक है।

भोजन में बिना छने आटे की चोकर-सहित रोटी का प्रयोग करना चाहिए। कब्ज वालों को दालों की अपेक्षा फल और हरी सब्जियों का अधिक प्रयोग करना चाहिए। बहुत मसालेदार भोजन कब्ज का कारण बनते हैं। भोजन में घी, दूध, मलाई, मक्खन आदि पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए। भोजन सदा नियत समय पर करना चाहिए।

उपर्युक्त बातों पर ध्यान देने से कब्ज नहीं होगी। यदि फिर भी किसी कारण से कब्ज हो जाए तो निम्नलिखित प्रयोग लाभ-दायक सिद्ध होंगे।

१. सायंकाल तांबे के एक पात्र में पानी भरकर रख दो और प्रातः उषःपान के लिए उसी का प्रयोग करो। इससे शौच खुलकर आने लगेगा।

२. कब्ज को दूर करने के लिए एनिमा (Enema) एक सुन्दर उपाय है। सप्ताह में एक बार एनिमा लेने से सारी अन्तड़ियों की शुद्धि हो जाती है।

३. मुरब्बे की एक या दो हरड़ गुठली निकालकर रात को सेवन करनी चाहिए, ऊपर से गर्म दूध या गर्म जल पीना चाहिए। इससे प्रातः पेट साफ हो जाता है। हरड़ आमाशय को तो साफ करती ही है, अन्तड़ियों के लिए भी बहुत लाभदायक है।

४. जुलाफा हरड़ तीन ग्राम और मिश्री तीन ग्राम,

दोनों को खरल में घोटकर बारीक कर लें। प्रातः इसकी फंकीं लेकर ऊपर से पानी पी लें। दो-तीन दस्त आकर पेट साफ हो जाएगा।

शौच जाते समय एक बड़ा जल-पात्र अपने साथ ले जाएँ जिसमें डेढ़-दो सेर पानी आ जाए। छोटी-सी लुटिया या गिलास ले जाना ठीक नहीं है। शौच के पश्चात् मूत्रेन्द्रिय और गुदा को ठंडे जल से अच्छी प्रकार धोना चाहिए। सुश्रुत में लिखा है—"मल-मार्गों को अच्छी प्रकार धोने से उज्ज्वलता आती है, बल बढ़ता है तथा शरीर और मन पवित्र होते हैं।"

शौच से आकर हाथ, पाँव और मुख धोने चाहिए। ऐसा करने से थकावट दूर होती है और नेत्र-ज्योति बढ़ती है।

दन्त-धावन

दाँतों की उपमा मोतियों से दी जाती है। मोतियों का सौन्दर्य, उनकी चमक-दमक और आभा एवं लावण्य किसे अपनी ओर आकृष्ट नहीं करते! मुख के ये अनुपम एवं अमूल्य मोती मुखमण्डल को चमत्कारिक सौन्दर्य प्रदान करते हैं। सुन्दर दाँतों में एक विशेष आकर्षण और जादू होता है, उनमें मद और मोहकता होती है।

मनुष्य शरीर के लिए दाँत कितने उपयोगी हैं, यह कहने की आवश्यकता नहीं। दाँत हमारे शरीर के निर्माता और रक्षा के द्वार हैं। सचमुच Teeth are the builders of the body. दाँतों के स्वस्थ रहने पर ही शरीर स्वस्थ रहता है। दाँतों के रोगी होने पर शरीर भी रोगी हो जाता है। दाँतों से सुन्दरता में श्रीवृद्धि होती है। दाँतों के बिना मुख की शोभा एवं सुन्दरता विलीन होकर मनुष्य सौन्दर्यविहीन बन जाता है। इसलिए हमारे महर्षियों एवं आयुर्वेदाचार्यों ने इनके रक्षण का उपदेश दिया है।

दाँतों के स्वच्छ न रहने से जोड़ों में दर्द, हृदय-विकार, नेत्र-विकार और मस्तिष्क के रोग हो जाते हैं; मुँह में दुर्गन्ध रहती है; मसूड़े फूल जाते हैं। सदा स्मरण रखो यदि दाँत स्वास्थ्य नहीं तो मनुष्य अपने को स्वस्थ नहीं रख सकता।

दाँतों को स्वस्थ और बलिष्ठ रखना कुछ कठिन काम नहीं है। यदि हम प्रतिदिन नियत समय पर दन्त-धावन करें तो सौ वर्ष से पूर्व दाँतों के हिलने या गिरने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। हमारे प्राचीन आयुर्वेदाचार्यों ने दातुन की बड़ी प्रशंसा की है और उसके करने की विधि पर भी प्रकाश डाला है।

दातुन के लिए नीम, कीकर, खदिर, बबूल, महुआ, करञ्ज, कचनार, अर्जुन, तेजबल, पीपल और वट का प्रयोग किया जा सकता है। मौलश्री की दातुन भी बहुत उपयोगी है। मौलश्री को संस्कृत में 'वज्रदन्ती' कहते हैं। संस्कृत में वज्र हीरे को भी कहते हैं। हीरा अपनी दृढ़ता और कान्ति के लिए प्रसिद्ध है। मौलश्री की दातुन करने से दाँत हीरे के समान कान्तियुक्त और दृढ़ बन जाते हैं। इसके सम्बन्ध में कहा है—

दन्ता भवन्ति चपला अपि वज्रतुल्या ।

दाँत मोती के समान सुन्दर और वज्र के तुल्य दृढ़ बन जाते हैं। शायद ही कोई रोग ऐसा होगा जो मौलश्री की दातुन करने से नष्ट न हो। परन्तु इसके वृक्ष सर्वत्र नहीं मिलते, अतः अपनी सुविधानुसार उपर्युक्त किसी भी वृक्ष की दातुन की जा सकती है।

सुश्रुत के अनुसार—"कड़वे पेड़ों में नीम की, कसैले वृक्षों में खैर की, मीठे वृक्षों में महुए और चटपटे वृक्षों में करञ्ज (कनेर) की दातुन करना अच्छा है।"

यूनानी ग्रन्थ 'इलाजुलगुर्बा' में लिखा है—"जो व्यक्ति नीम की दातुन करता है, उसके दाँतों में कीड़े नहीं लगते और न उसके दाँतों में दर्द ही होता है।"

दातुन के लाभों का वर्णन करते हुए सुश्रुताचार्य ने लिखा है—"दातुन करने से मुख की दुर्गन्ध, दाँतों की मैल और कफ का नाश होता है। उज्ज्वलता, अन्न में रुचि और चित्त में प्रसन्नता होती है।"

दातुन करना भी एक कला है। खड़े होकर, मित्रों के साथ गप्पें मारते हुए और मार्ग में चलते हुए तथा इधर-उधर थूकते हुए दातुन कदापि न करें। १२ अंगुल लम्बी और कनिष्ठिका अंगुली के समान मोटी दातुन लेकर और उसे दाँतों से चबाकर उसकी कूँची बनाएँ। ऐसा करने से दाँत और मसूड़े दृढ़ होते हैं। कूँची को जल से शुद्ध कर सभी दाढ़ों और दाँतों को अन्दर और बाहर से स्वच्छ करें। दातुन करते समय यह ध्यान रखें कि दातुन सीधी ओर से बायीं ओर और बायीं ओर से सीधी ओर को न करें, अपितु नीचे से ऊपर और ऊपर से नीचे की ओर करें। दातुन करते समय जलपात्र अपने साथ लेकर बैठें और जब भी दातुन मुख से बाहर निकालें तभी उसे धो लें। बीच-बीच में कुल्ला अवश्य करते रहें। इस प्रकार दातुन करने से ही यथार्थ लाभ होगा।

आज दातुनों का स्थान टूथ-पेस्ट ने ले लिया है। मेरे अपने विचार में टूथ-पेस्ट का प्रयोग नहीं करना चाहिए। टूथ-पेस्ट में साबुन डाला जाता है। टूथ-पेस्ट लगाते समय जो झाग बनता है वह साबुन के कारण ही बनता है। साबुन दाँतों के लिए हानिकारक है, इससे पायोरिया हो जाता है। ब्रश का प्रयोग भी ठीक नहीं है। इससे दाँतों की सफाई के साथ मसूड़ों का भी सफाया

हो जाता है। आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार केवल निम्नांकित व्यक्तियों को दातुन नहीं करनी चाहिए—जिनके गले, तालू तथा जीभ में सूजन हो, जिनका मुख आया हुआ हो, जो श्वास के रोगी हों, जो अति दुर्बल हों, जिन्हें मूर्च्छा आती हो, जो थके हुए हों, जिनके कान में दर्द हो, नेत्रों में रोग हो, बुखार हो या हृदय का रोग हो ऐसे व्यक्तियों को दातुन नहीं करनी चाहिए।

जो व्यक्ति दातुन करने के अयोग्य हैं अथवा जिन्हें दातुन उपलब्ध नहीं होती, ऐसे विद्यार्थियों के लिए यहां मंजनों के योग लिखे जाते हैं। इन्हें बनाकर सेवन करें और लाभ उठाएँ।

भारत के जनसाधारण में प्रचलित एक अत्यन्त प्रसिद्ध योग है—

त्रिफला त्रिकुटा तूतिया, पांचों लवण पतङ्ग।
दाँत वज्र सम होत हैं, माजूफल के सङ्ग॥

बड़ी हरड़, बहेड़ा और आँवला—इनका छिलका, सोंठ, बड़ी पीपल, काली मिर्च, नीला थोथा भुना हुआ, पांचों नमक, पतङ्ग लकड़ी और माजूफल—इन सभी वस्तुओं को बराबर-बराबर लेकर कूट-पीस-छानकर मंजन बना लें और इसका प्रयोग करें। इसके लगातार प्रयोग से दाँत दृढ़ होते हैं और मोतियों की भांति चमक उठते हैं। मसूड़ों के रोग दूर होकर सबल बनते हैं। दाँत और दाढ़ का दर्द तो इस मंजन को लगाते ही दूर हो जाता है।

दूसरा योग—यह मंजन भी बहुत उपयोगी है। यह दाँतों की समस्त बीमारियों को दूर कर उन्हें मोती के समान चमका देगा। थोड़ी-सी लागत से ढेर सारा बन जाता है। योग यह है—

सोंठ, काली मिर्च, तेजपात, फिटकरी, तुम्बरू, नमक

सेंधा, सफेद सुर्मा और गेरू प्रत्येक १०-१० ग्राम, चाक मिट्टी बढ़िया २० ग्राम। पहले फिटकरी को फुला लो तथा सफेद सुर्मा की भस्म बना लो। फिर सबको कूट-पीसकर कपड़छन कर लो और इस मंजन का प्रयोग करो।

लवण और सरसों के तेल को मिलाकर उसे मंजन के रूप में प्रयुक्त करना भी बहुत लाभदायक है।

मंजन सदैव बीचवाली अंगुली से करें, तर्जनी से कभी न करें क्योंकि उसमें एक प्रकार की बिजली होती है जो दाँतों को कमजोर कर देती है। यह देखा गया है कि कुम्हड़ा और लौकी के फूल तर्जनी दिखाने से मर जाते हैं।

इहाँ कुम्हड़ बतियाँ कोउ नाहीं।
जे तरजनी देखि मरि जाहीं।।

(तुलसी० रामचरित०)

पद्मपुराण में भी कहा है-

मध्यमानामिकाभ्यां च वृद्धाङ्गुष्ठेन च द्विजः।
दन्तस्य धावनं कुर्यान्न तर्जन्या कदाचन।।

मध्यमा, अनामिका और अंगुष्ठ से ही दन्त-धावन करना चाहिए, तर्जनी अंगुली से कदापि नहीं।

दाँतों को स्वस्थ रखने के लिए निम्न बातों का सर्वदा ध्यान रखें-

१. सख्त वस्तुओं को अच्छी प्रकार चबा-चबाकर खाना दाँतों को सुदृढ़ बनाने के लिए एक अच्छा व्यायाम है।

२. भोजन के पश्चात दाँतों की अच्छी प्रकार शुद्धि कर लेनी चाहिए।

३. बहुत गर्म और बहुत ठण्डे पदार्थ दाँतों को हानि पहुँचाते हैं।

४. ठण्डी वस्तुओं के सेवन के पश्चात् गर्म वस्तुओं का और गर्म वस्तुओं के पश्चात् ठण्डी वस्तुओं का प्रयोग बहुत ही हानिकारक है। ठण्डी और गर्म वस्तुओं के सेवन में कम-से-कम २० मिनट का अन्तर रहना चाहिए।

५. चाय, कॉफी, सोडा, लैमन, बर्फ, पान-चर्वण और तम्बाकू का सेवन दाँतों को हानि पहुँचाता है, अतः इनका सेवन न करें।

जिह्वा-शोधन

दन्त-धावन के पश्चात् जीभ का शोधन करना चाहिए, क्योंकि जिह्वा-शोधन के बिना दाँतों की सफाई अधूरी है। जब दातुन के द्वारा दाँतों की शुद्धि कर चुकें तो दातुन को धोकर उसको बीच में से दो कर लें। एक भाग को फेंक दें और एक को मोड़कर उसके दोनों सिरों को दोनों हाथों से पकड़कर धीरे-धीरे जीभ पर फेरते हुए जीभ पर लगे हुए सफेद मैल को छुड़ावें। मंजन का प्रयोग करने वाले व्यक्ति मध्यमा और अनामिका अँगुली को मुख में डालकर कण्ठस्थ कफ आदि को बाहर निकाल डालें। हाथ के अँगूठे से ऊपर के तालु को शुद्ध करें। फिर मुख में जल भर-भरकर खूब हिला-हिलाकर कुल्ले करें। इस प्रकार जिह्वा को साफ करने से मुख की बदबू दूर होती है और मुख तथा दन्त-रोग नहीं होते।

प्रातः भ्रमण

जैसा पूर्व लिखा जा चुका है, प्रातःकाल का समय शारीरिक स्वास्थ्य तथा मानसिक एवं बौद्धिक शक्तियों के विकास के लिए परम-उपयोगी है। इस समय समस्त वातावरण मधुमय होता है। धरती से मादक मन्दगन्ध उठती है। शीतल समीर बहता है जो शरीर को स्फूर्ति प्रदान करता

है। इस अमृतमय शीतल सुगन्धित समीर के स्पर्श से शरीर में तेज, ओज, बल, कान्ति, स्फूर्ति, उत्साह एवं आरोग्यता का संचार होता है। चित्त प्रसन्न होता है, मन में उल्लास की तरंगें उठती हैं। इस मधुमय एवं आनन्दमय वातावरण में भ्रमण करना बहुत ही लाभदायक है।

प्रातः भ्रमण एक सुन्दर व्यायाम है। यह संजीवनी बूटी के समान गुणकारी है। यह मरते हुए व्यक्ति में जीवन का संचार कर देता है। यह निराश व्यक्ति को आशा की किरण दिखाता है।

परन्तु भ्रमण कैसे किया जाए, इसकी विधि को समझ लें। भ्रमण करते समय गर्दन उठी हुई हो, रीढ़ की हड्डी सीधी हो, सीना तना हुआ हो, घुटने बिल्कुल सीधे हों। दोनों हाथ पूरी तरह से हिलते रहने चाहिए। शरीर पर वस्त्र कम-से-कम होने चाहिए। मुँह बन्द होना चाहिए। श्वास नाक से लें और गहरे-गहरे श्वास लें। ऐसा करने से सीना बढ़ेगा और रक्त की शुद्धि होगी। भ्रमण के समय समस्त सांसारिक चिन्ताओं को दूर कर प्रकृति के सौन्दर्य को निहारिए। व्यर्थ की बातों को सोचना छोड़कर ऐसा अनुभव कीजिए—'प्रातःकाल की यह दिव्य अमृतमय वायु मेरे शरीर के कण-कण में प्रविष्ट होकर रक्त को शुद्ध कर रही है। इससे मेरे शरीर की त्वचा सुन्दर बन रही है। मेरे शरीर में तेज, ओज और शक्ति का संचार हो रहा है। मेरे रोग नष्ट हो रहे हैं।'

जहाँ तक हो सके अकेले ही घूमें। यदि किसी मित्र के साथ घूमना हो तो इधर-उधर की व्यर्थ की गप्पें न लगाएँ, क्योंकि ढीले-ढाले घूमने से भ्रमण का वास्तविक लाभ प्राप्त नहीं होता।

प्रातः भ्रमण के गुणों और आनन्द का वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता; यह तो स्वयं अनुभव करने

की वस्तु है।

महर्षि दयानन्द प्रतिदिन १२ मील की दौड़ लगाया करते थे। महात्मा गाँधी जी के जीवन में प्रार्थना के साथ प्रातः भ्रमण भी एक आवश्यक कार्य था। प्रतिदिन भ्रमण से भूख खुलकर लगती है। भ्रमण पुराने कब्ज की प्रसिद्ध औषधि है। बीसियों वर्ष का पुराना कब्ज जो औषधियों से दूर नहीं होता, भ्रमण से हट जाता है। परगेटिव-पिल्स (दस्तावर गोलियां) खाकर अथवा बीड़ी-सिगरेट पीकर शौच जाने की इच्छा रखने वाले विद्यार्थियो! इस प्राकृतिक प्रयोग को अपनाओ, कुछ ही दिनों में आपका कायापलट हो जाएगा।

जिन्होंने मलाई और रबड़ी खा-खाकर तोंद को फुलाया हुआ है, जिन्हें सदा अपच की शिकायत रहती है, ऐसे व्यक्तियों के लिए भ्रमण एक रामबाण दवा है। प्रमेह के रोगियों के लिए तो भ्रमण से बढ़कर कोई दवा है ही नहीं। प्रमेह के रोगी को सहस्त्रों रुपये की औषधियों से उतना लाभ नहीं होता, जितना भ्रमण से होता है।

जिन युवकों को काम-वासना अधिक सताती हो, उन्हें तो प्रतिदिन भ्रमण का अभ्यास अवश्य ही डालना चाहिए। भ्रमण से असामयिक कामेच्छा की विनाशकारी भावना की ओर से ध्यान हटा रहता है।

जो स्थान सुन्दर और पवित्र हो, जहाँ शुद्ध वायु बहती हो, ऐसे स्थान पर भ्रमण करना चाहिए। शहरों में अनेक पार्क व बाग-बगीचे होते हैं, वहां भ्रमण किया जा सकता है। ग्रामों में आबादी से बाहर खेतों की ओर टहलने के लिए निकल जाइए।

भ्रमण का सबसे उत्तम समय प्रातःकाल ही है; परन्तु जो प्रातःकाल नहीं जा सकते, वे सायंकाल घूम

सकते हैं। घूमते हुए दूर निकलकर शुद्ध वायु का सेवन कर और चारों ओर फैली हुई विस्तृत हरियाली को देखकर आनन्द लें।

भ्रमण बहुत लाभदायक है, परन्तु अति प्रत्येक स्थान पर हानिकारक होती है; अत: स्वबल के अनुसार ही भ्रमण करें। आयुर्वेद के ग्रन्थों में कहा है—

यत्तु चंक्रमणं नातिदेहपीड़ाकरम्भवेत्।
तदायुर्बलमेघाग्निप्रदमिन्द्रियबोधनम्।।

जो भ्रमण शरीर को अत्यधिक थकावट कष्ट नहीं देता, वह आयु, बल एवं बुद्धि प्रदान करने वाला होता है, जठराग्नि को बढ़ाता है और इन्द्रियों की शक्ति को जागृत करता है।

भ्रमण एक ऐसा व्यायाम है जिसे प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है। कुछ दिनों के रोगी भी इससे लाभ उठा सकते हैं क्योंकि इस व्यायाम से शरीर पर अधिक भार नहीं पड़ता। आबाल-वृद्ध, स्त्री-पुरुष, युवक और युवतियाँ सभी इससे लाभ उठा सकते हैं। आवश्यकता है इसके नियमपूर्वक सेवन की। भ्रमण के सम्बन्ध में डॉ० जे० बी० स्कॉट ने ठीक ही लिखा है—

Walking at moderate pace is the best exercise for the most people. It costs nothing but the shoe-leather.

अर्थात् मध्यम गति से भ्रमण करना अधिकांश व्यक्तियों के लिए एक सुन्दर व्यायाम है। इसमें जूते के तले के अतिरिक्त और कुछ खर्च नहीं होता। विद्यार्थियो! भ्रमण को अपनाइए। सात बजे तक अपाहिजों की भाँति खाट पर पड़े रहकर अपने अमूल्य स्वास्थ्य को नष्ट मत करो।

मालिश

वेद में कहा है–

अभ्यञ्जनं सुरभिः सा समृद्धिः।

(अथर्व० ६।१२४।३)

तैल मालिश करना, अंजन=सुरमा लगाना तथा सुगन्धित द्रव्यों का प्रयोग करना समृद्धि का कारण है।

तैल-मर्दन से शरीर सुन्दर, सुकोमल, सुदृढ़, नीरोग एवं भरा हुआ रहता है मालिश करने से मुखमण्डल पर झुर्रियाँ भी नहीं पड़तीं। भिन्न-भिन्न स्थानों पर मालिश का लाभ भिन्न-भिन्न होता है।

सिर में तैल की मालिश से बाल कोमल और चमकदार बनते हैं। मस्तिष्क को शक्ति मिलती है। आँखों को शक्ति मिलती है। दृष्टि तीव्र होती है। नींद अच्छी आती है चेहरे की मालिश से सौन्दर्य बढ़ता है। नाफ पर मालिश करने से कब्ज दूर होती है। मालिश शरीर के सभी रोगों को दूर कर इसे स्वस्थ्य और शक्तिशाली बनाती है। दाद, खाज, खुजली, चम्बल आदि रोग दूर रहते हैं।

सुश्रुत के चिकित्सा-स्थान में लिखा है–

जलसिक्तस्य वर्द्धन्ते यथा मूलेंऽकुरास्तरोः।
तथा धातुविवृद्धिर्हि स्नेहसिक्तस्य जायते॥

"जैसे वृक्ष की जड़ में पानी देने से उसके डाली और पत्तों के अंकुर बढ़ते हैं, फैलते और फूटते हैं तथा वृक्ष पुष्ट हो जाता है, इसी प्रकार तैल-मालिश से रस, रक्त, मांस आदि धातुओं की वृद्धि होकर मनुष्य का शरीर पुष्ट और सुन्दर हो जाता है–

महर्षि चरक ने मालिश की प्रशंसा करते हुए कहा है–

"जैसे तैल या चिकना पदार्थ लगाने से मिट्टी का बर्तन दृढ़ हो जाता है, जैसे चिकना पदार्थ रगड़ने से चमड़ा उत्तम हो जाता है, और जिस प्रकार रथ का पहिया चिकनाई लगाने से कार्य करने में समर्थ हो जाता है, उसी प्रकार तैल की मालिश करने से शरीर दृढ़ हो जाता है, चमड़ी सुन्दर हो जाती है, वायु की पीड़ाएँ दूर हो जाती हैं। शरीर क्लेश और शारीरिक श्रम सहने में समर्थ हो जाता है। तैल की मालिश करना त्वचा को लाभ पहुँचाता है। अतः मनुष्य को तैल की मालिश करनी चाहिए।"

तैल मालिश से आयु बढ़ती है, शरीर पर कान्ति आती है और बुढ़ापा दूर रहता है। तैल का महत्त्व घी से कम नहीं है।

महर्षि चरक के अनुसार तो–

घृतादष्टगुणं तैलं मर्दने न तु भक्षणं।

तैल में घी से आठ-गुणा शक्ति है। अन्तर केवल इतना ही है कि घी खाने पर गुणकारी होता है और तैल मालिश करने पर। आज के इस दरिद्रता के युग में जब शुद्ध दूध, दही और घी आदि पदार्थों का सर्वथा अभाव है, चिकनाई की इस कमी को तैल मालिश द्वारा दूर किया जाए तो हमारा स्वास्थ्य उत्तम बन सकता है। साथ ही हम दाद, खाज, फोड़ा-फुंसी आदि विकारों से भी बचे रह सकते हैं।

मालिश के लिए सरसों का कच्ची घानी का तैल अत्यन्त उपयोगी है। मालिश का क्रम इस प्रकार रखें– सबसे पूर्व टाँगों की मालिश करें, फिर भुजाओं की। भुजाओं के मर्दन के पश्चात पीठ, कन्धे और गर्दन की मालिश करें, फिर पेट और छाती की मालिश करनी

चाहिए। शरीर-रचना के अनुसार इन अंगों की भी टुकड़े-टुकड़े करके मालिश करें। शीतकाल में खुली धूप में और गर्मियों में शीतल छाया में मालिश करें। पीठ, भुजा और टाँगों की मालिश नीचे से ऊपर की ओर करनी चाहिए, सिर की ऊपर से नीचे की ओर। पेट और छाती की मालिश हृदय से ऊपर की ओर करनी चाहिए। यह मालिश युवक और युवतियों, स्त्री और पुरुषों सभी के लिए उपयोगी है।

प्रत्येक अंग पर तैल लगाकर उसे खूब मलिए। सिर, कान और पाँवों की तली में विशेष रूप से मालिश करनी चाहिए। प्रतिदिन सिर में तैल-मालिश से सिर-दर्द, बालों का झड़ना, मस्तिष्क की निर्बलता और बालों का सफेद होना आदि व्याधियाँ दूर हो जाती हैं। कानों में तैल डालने से वायु के रोग नहीं होते। फोड़े, फुन्सी और जबड़ों के अकड़ने का भय नहीं रहता। कम सुनाई देना और बहरापन दूर होता है। पैरों की तली की मालिश से नेत्र-ज्योति बढ़ती है।

मालिश के लिए पर्याप्त समय चाहिए। यदि इतना समय न हो तो आप प्रतिदिन स्नान करते समय जिस प्रकार सारे शरीर पर साबुन लगाते हैं, उसी प्रकार साबुन के स्थान पर सम्पूर्ण शरीर पर तैल की मालिश कर लें। इस मालिश में दो-तीन मिनट से अधिक समय नहीं लगेगा, परन्तु इस प्रकार निरन्तर मालिश करने से वृद्धावस्था आपके ऊपर आक्रमण नहीं करेगी।

यदि आप प्रतिदिन मालिश न कर सकें तो सप्ताह में अपनी सुविधानुसार किसी एक दिन मालिश कर सकते हैं। प्रति सप्ताह मालिश करने से भी पर्याप्त लाभ होगा।

बुखार हो, खाँसी हो, और वमन (कै) होती हो

तो मालिश नहीं करनी चाहिए।

मालिश करते ही तुरन्त नहीं नहाना चाहिए। आधा घण्टा पश्चात स्नान करना चाहिए।

भोजन और मालिश के मध्य में कम-से-कम तीन घण्टे का अन्तर होना चाहिए।

जब शरीर पर फोड़े-फुन्सियाँ निकली हुई हों तो तैल मर्दन नहीं करना चाहिए।

स्नान

प्रतिदिन स्नान करना भी वैदिक दिनचर्या का एक आवश्यक अंग है। स्नान करने से शरीर शुद्ध हो जाता है, रोमकूप खुल जाते हैं, शरीर की उष्णता, आलस्य और निद्रा दूर हो जाती है, चित्त शान्त होता है, मन प्रफुल्लित होता है। स्वाध्याय और ईश्वराराधना में मन लगता है। पाचन-शक्ति तीव्र होकर बल और आरोग्यता की प्राप्ति होती है।

वेद में जल को जीवन और अमृत का नाम दिया गया है-

आप इद्वा उ भेषजीरापो अमीवचातनीः।
आपः सर्वस्य भेषजीस्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम्।।

(ऋ० १०।१३७।६)

जल ही औषधि है, जल रोगों का शत्रु है। यह सभी रोगों का नाश करता है। अतः तुम्हारे रोगों को भी यह नष्ट करेगा।

अप्स्वन्तरमृतमप्सु भेषजमपामुत प्रशस्तये।
देवा भवत वाजिनः।। (ऋ० १।२३।१९)

जल में अमृत=आरोग्यता प्रदान करने की शक्ति है। जल में हर प्रकार के रोगों को दूर करने की शक्ति है।

जल कल्याण करने वाले हैं। जल का ठीक प्रयोग करके अर्थात् इसके पान से और इसके स्नान से बलवान् बनो।

वेद ने एक स्थान पर यहाँ तक कहा है—

भिषग्भ्यो भिषक्तरा आपः। (अथर्व० १९।२।३)

जल औषधियों की भी परम औषधि है।

इन मंत्रों में जल-चिकित्सा का बीज विद्यमान है। जल के इस महत्त्व को समझकर ही आज जल-चिकित्सा के द्वारा भी रोगों की चिकित्सा की जाने लगी है। अब पाश्चात्य विद्वान भी जल के महत्त्व को अनुभव करने लगे हैं। जर्मनी के प्रसिद्ध डॉक्टर लुई कुनी तो केवल स्नान-क्रिया से ही मनुष्य के सभी रोगों का प्रतिकार किया करते थे।

शरीर-शुद्धि के लिए स्नान परमावश्यक है। महर्षि दयानन्द के शब्दों में—

"आयुर्वेद विद्या के अनुसार प्रतिदिन स्नान करना बल, पुष्टि का वर्धक, आरोग्यता तथा स्वास्थ्य का सम्पादक है। इससे देह में स्वच्छता और स्फूर्ति बनी रहती है।" (दयानन्द प्रकाश)

महर्षि चरक ने स्नान के निम्न लाभ बताये हैं।

पवित्रं वृष्यमायुष्यं श्रमस्वेदमलापहम्।
शरीरबलसंधानं स्नानमोजस्करं परम्।।

(चरक सूत्र० ५।९२)

स्नान करना शरीर को पवित्र करता है, आयु को बढ़ाता है, थकावट तथा पसीने और मैल को दूर करता है, शारीरिक बल को बढ़ाता है और ओज उत्पन्न करता है।

किसी अनुभवी विद्वान ने स्नान के गुणों का वर्णन करते हुए ठीक ही लिखा है—

गुणा दसा स्नानपरस्य साधो,
रूप च तेजश्च बलं च शौचम्।
आयुष्यमारोग्यमलोलुपत्वं,
दुःस्वप्ननाशश्च यशश्च मेधा।।

अर्थात् हे श्रेष्ठ पुरुष! स्नान करने से निम्न दस लाभ होते हैं—शरीर का सौन्दर्य निखरता है, तेज और बल की प्राप्ति होती है, पवित्रता आती है, आयु बढ़ती है, आरोग्यता प्राप्त होती है, चञ्चलता का नाश होता है, दुःस्वप्न नहीं आते, यश फैलता है और मेधा बुद्धि की प्राप्ति होती है।

स्नान सदैव ठण्डे जल से ही करना चाहिए। बहुत विवश होने पर ही गर्म जल का प्रयोग करना चाहिए। सिर पर तो प्रत्येक दशा में शीतल जल ही डालना चाहिए। महर्षि वाग्भट्ट ने स्पष्ट बताया है कि—

"गर्म जल से सिर धोने से नेंत्रों की ज्योति कम हो जाती है, केश निर्बल हो जाते हैं और मस्तिष्क को बहुत हानि पहुँचती है।"

अब शीतल जल की उपयोगिता यूरोप जैसे स्थान के रहने वाले डॉक्टरों ने भी स्वीकार की है। डॉ० निकोलस लिखते हैं—

"ठण्डे पानी से मत डरो। मैंने ठण्डी हवा लगने से लोगों को बीमार होते देखा है, परन्तु ठण्डे पानी से नहाने पर किसी को बीमार होते नहीं देखा। मैं ४० वर्षों से निरन्तर ठण्डे जल से स्नान किया करता हूँ। जब हवा का तापमान थर्मामीटर में शून्य से भी १० डिग्री नीचे हो गया था और पानी की एक बूँद फर्श पर पड़कर ही जमकर बर्फ बन जाती थी, उस समय भी मैंने ठण्डे जल से स्नान किया है। ठण्डे जल के स्नान से मैंने सदा बल और आरोग्य प्राप्त किया है।"

स्नान की विधि इस प्रकार है। कुएँ पर अथवा नल के नीचे जहां भी सुविधा हो, एक लंगोट अथवा कच्छा पहनकर बैठ जाइए। अपने निकट एक लोटा और पानी-भरी बाल्टी रख लीजिए। सर्वप्रथम सिर नीचा करके दो-तीन लोटे पानी सिर पर डालिए। सिर पर पानी डालने से मस्तिष्क की गर्मी पाँव के मार्ग से निकलकर शान्त हो जाती है। इसके विपरीत पहले पाँव धोने से शरीर की गर्मी सिर में समा जाती है और मस्तिष्क में नाना रोग तथा व्याधियाँ होने लगती हैं। सिर को भिगोने के पश्चात् शरीर के तमाम अंगों को अच्छी प्रकार भिगो लीजिए। शरीर के अच्छी प्रकार गीले हो जाने पर खद्दर के तौलिये से रगड़ना शुरू कीजिए। ५-७ मिनट रगड़कर घर्षण स्नान कीजिए जिससे रोम-कूपों में घुसा मल फूलकर साफ हो जाए। नाभि के नीचे खूब ठण्डे जल की धार डालिए, इससे स्वप्नदोष दूर होगा। अन्त में खद्दर के तौलिये से पोंछकर शरीर को सुखा लो और वस्त्र धारण कर लो। बस आपका स्नान हो गया। ब्रह्मचारी यदि दोनों समय स्नान करें तो अधिक अच्छा है। बहुत-से युवक स्नान करने में बहुत जल्दी करते हैं। वे एक-दो लोटा पानी शरीर पर डालते हैं। कहीं शरीर गीला होता है और कहीं नहीं। स्नान की यह विधि उचित नहीं है। इससे कोई भी लाभ नहीं होता।

जिन विद्यार्थियों या व्यक्तियों के समीप नदी या तालाब हो उन्हें उसी में स्नान करना चाहिए। नदी अथवा तालाब में स्नान करने से स्नान के साथ-साथ तैरने का सुन्दर व्यायाम भी हो जाता है। तैरने से सभी अंग पुष्ट होते हैं, फेफड़े शुद्ध एवं बलवान् होते हैं, शरीर में चुस्ती और स्फूर्ति आती है, उत्साह बढ़ता है

और जठराग्नि प्रदीप्त होती है। बरसात में नदियों और तालाबों का पानी मलिन हो जाता है, अतः इन दिनों में कुएँ या नल पर ही स्नान करना चाहिए।

प्रतिदिन साबुन का प्रयोग बहुत हानिकारक है। हाँ कभी-कभी साबुन का प्रयोग किया जा सकता है। साबुन के स्थान पर रीठे, आँवले अथवा बेसन का प्रयोग अधिक लाभदायक है। सिर धोने के लिए दही अथवा मुलतानी मिट्टी का प्रयोग करना उत्तम है।

स्नान के सम्बन्ध में महर्षि मनु के इस आदेश को सदा स्मरण रखना चाहिए—

न स्नानमाचरेद् भुक्त्वा नातुरो न महानिशि।
न वासोभिः सहाजस्त्रं नाविज्ञाते जलाशये॥

(मनु० ४।१२९)

भोजन करके, रुग्ण अवस्था में, मध्यरात्रि में, कपड़ों के साथ और (अविज्ञात) जिसके विषय में कुछ ज्ञान न हो, ऐसे जलाशय में स्नान नहीं करना चाहिए।

नेत्र रक्षा

मनुष्य शरीर में जितने अंग हैं उनमें नेत्र सर्वोत्तम हैं। **"सर्वेन्द्रियाणां नयनं प्रधानम्।"** किसी ने ठीक ही कहा है "आँख गई संसार गया।" एक और कहावत भी बहुत प्रसिद्ध है—"आँख है तो जहान है।" सचमुच नेत्र नहीं तो संसार सूना है। इसीलिए वृद्ध वाग्भट्ट ने नेत्रों की रक्षा पर बल देते हुए लिखा है—

चक्षु रक्षायां सर्वकालं मनुष्यैः,
यत्नः कर्तव्यो जीविते यावदिच्छा।
व्यर्थो लोकोऽयं तुल्यरात्रिं दिवानां
पुंसामन्धानां विद्यमानेऽपि वित्ते॥

(वा०उ०स्था०अ० १)

"जब तक मनुष्य की जीवित रहने की इच्छा हो, तब तक सदैव सावधानी से नेत्र-रक्षा के उपाय करने चाहिए, क्योंकि भरपूर धन-धान्य तथा अन्य सामग्री होने पर भी नेत्रहीन अन्धे लोगों के लिए संसार व्यर्थ है।

यहां हम विभिन्न ग्रन्थों से नेत्र-रक्षा के लिए कुछ अनुभूत प्रयोगों का उल्लेख करते हैं। पाठक इन पर आचरण करें और अपने नेत्रों की रक्षा करें-

१. चलती हुई रेलगाड़ी वा मोटर में पढ़ने से, अथवा मुँह बाहर निकालने से धुआँ या मिट्टी पड़कर, आँखें खराब हो जाती हैं।

२. सदैव सीधे बैठकर पढ़ो। पढ़ते समय पुस्तक आँखों से कम-से-कम १३ इंच दूर होनी चाहिए। लिखने और पढ़ने का कार्य कभी झुककर मत करो। झुककर लिखने और पढ़ने से नेत्र-ज्योति मन्द होती ही है, साथ ही फेफड़े भी खराब होते हैं।

३. दूसरे की सुर्मादानी, सलाई, तौलिया, टब, चश्मा आदि का प्रयोग मत करो। इससे नेत्र-रोगों की छूत फैलती है।

४. ग्रहण की ओर नहीं देखना चाहिए। यदि देखना ही हो तो धुँधले शीशे के द्वारा देखो।

५. यदि आँखें दुखनी आ रही हों तो ऐसी अवस्था में पढ़ना नहीं चाहिए, क्योंकि जोर पड़ने से रोग बढ़ जाता है।

६. रात्रि में चन्द्रमा की ओर टकटकी लगाकर देखने से नेत्र ज्योति बढ़ती है।

७. प्रातः ओस पड़ी हुई घास पर नंगे पैर घूमने से भी नेत्र ज्योति बढ़ती है।

८. पैरों की तली में प्रतिदिन तैल की मालिश

करना आँखों के लिए बहुत लाभदायक है।

९. 'चरक-संहिता' में लिखा है कि नेत्रों के लिए किसी उत्तम सुर्मे का प्रतिदिन प्रयोग करना चाहिए। पाँचवें या सातवें दिन रसोत रगड़कर लगानी चाहिए। इससे नेत्रों का दूषित जल निकल जाता है और नेत्र-ज्योति तीव्र होती है।

१०. अच्छे प्रकाश में ही पढ़ना चाहिए। प्रकाश पीछे की ओर से, सीधे कन्धे की ओर से आना चाहिए; सामने की ओर से नहीं। टेबललैम्प का प्रयोग भी उत्तम है।

११. सूर्योदय अथवा अस्त के समय धीरे-धीरे घटते या बढ़ते प्रकाश में पढ़ना आँखों के लिए बहुत हानिकारक है।

१२. रेलगाड़ी और बाजारों में घूम-घूमकर बेचने वालों से सुर्मा आदि कोई दवा नहीं लेनी चाहिए।

१३. दही से सिर धोना, कभी-कभी सिर में मक्खन अथवा बादाम-रोगन की मालिश करना, त्रिफला के पानी से नेत्र धोना, सरसों का शुद्ध तैल आँखों में लगाना, शहद आँजना, गुलाबजल से आँखों को धोना, नाक में सरसों का तैल सूँघना, उत्तम सुर्मा या काजल[१] लगाना—ये नेत्र-ज्योति बढ़ाने के उपाय हैं।

१४. दृष्टि-दौर्बल्य के कारण यदि पढ़ने में सिर-दर्द होता हो तो चश्मा लगवा लेना चाहिए।

१५. खूँटीदार खड़ाऊँ का प्रयोग भी आँखों के लिए लाभदायक होता है।

१६. भोजन के पश्चात् हाथ धोकर मुख और

---

१. मुरारी ब्रदर्स, कमलानगर, दिल्ली द्वारा निर्मित 'भीमसेनी काजल' और 'नाग ज्योति' सुर्मा आँखों के लिए बहुत लाभदायक है।

आँखों पर फेरने से नेत्र-ज्योति बढ़ती है।

१७. मल-मूत्र आदि के वेगों को रोकने से नेत्र-ज्योति कम होती है, अतः इन वेगों को कदापि नहीं रोकना चाहिए।

१८. जब पढ़ते-पढ़ते नेत्र थक जाएँ तो बीच में कुछ विश्राम देना चाहिए। जब तक थकावट दूर न हो जाए, पुनः पढ़ना आरम्भ न करें।

सन्ध्या अनुष्ठान

वेदादि शास्त्रों में प्रतिदिन सन्ध्या करने का विधान है; अतः स्नान से निवृत्त होकर एकान्त शुद्ध स्थान में प्रतिदिन प्रातः-सायं सन्ध्या करनी चाहिए। महर्षि मनु ने कहा है–

न तिष्ठति तु यः पूर्वां नोपासते यश्च पश्चिमाम्।
स शूद्रवद्बहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विजकर्मणः॥

(मनु० २।१०३)

जो द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य) प्रतिदिन प्रातः-सायं सन्ध्या नहीं करता, वह शूद्र की भाँति समस्त द्विज-कर्मों से बहिष्कार करने योग्य है।

देवी भागवत पुराण में कहा है–

सन्ध्या येन न विज्ञाता सन्ध्या येनानुपासिता।
जीवमानो भवेच्छूद्रो मृतः श्वा चैव जायते॥

(देवी० ११।१६।७)

जिन्हें न तो सन्ध्या का परिज्ञान है और न सन्ध्या करते ही हैं, ऐसे लोग जीवित अवस्था में शूद्र होते हैं और मरने पर कुत्ते की योनि में जन्म लेते हैं।

सन्ध्या दिनचर्या का एक आवश्यक और महत्त्वपूर्ण अंग है। वृद्ध चाणक्य जी ने भी कहा है–

विप्रो वृक्षस्तस्य मूलं च सन्ध्या
वेदाः शाखा धर्मकर्माणि पत्रम्।
तस्मान्मूलं यत्नतो रक्षणीयं,
छिन्ने मूले नैव शाखा न पत्रम्।।
(चाणक्यनीति १९।१३)

ब्राह्मण वृक्ष है और उसकी जड़ सन्ध्या है। वेद शाखाएँ हैं। धर्म-कर्म पत्ते हैं। सदा जड़ की सावधानता से रक्षा करनी चाहिए, क्योंकि जड़ के नष्ट हो जाने से शाखा और पत्र सभी-कुछ समाप्त हो जाते हैं।

यदि सन्ध्या को जीवन का आधार कहें तो कोई अत्युक्ति न होगी। सन्ध्या से शारीरिक स्वास्थ्य, मेधाबुद्धि और दीर्घायु-प्राप्ति होती है। मनु जी महाराज ने कहा है–

ऋषयो दीर्घसन्ध्यात्वाद्दीर्घमायुरवाप्नुयुः।
प्रज्ञां यशश्च कीर्तिं च ब्रह्मवर्चसमेव च।।
(मनु० ४।९४)

ऋषियों ने दीर्घ सन्ध्या के अनुष्ठान से दीर्घायु, मेधा, यश, कीर्ति और ब्रह्मतेज की प्राप्ति की।

पाश्चात्य सभ्यता के रंग-ढंग में पले आज के विद्यार्थी ईश्वर और धर्म की खिल्ली उड़ाते हैं। वे पूछते हैं–"ईश्वर के होने में क्या प्रमाण है?" हम संसार में सर्वत्र एक नियम और व्यवस्था देखते हैं। सूर्य समय पर उदय और अस्त होता है। चन्द्रमा नियमपूर्वक घटता और बढ़ता है। ग्रीष्म के पश्चात् वर्षा और शरद् ठीक नियम से होते हैं। यह नियम ही हमें बतलाता है कि इस नियम को बनाने वाला कोई है और वही ईश्वर है।

वैज्ञानिक ईश्वर को नहीं मानते, यह कहना भी अशुद्ध है। सर ऑलिवर लाज और आइनस्टाइन महोदय

का कथन है—

I believe in God..... who reveals himself in orderly harmony of the universe. अर्थात् मैं ऐसे ईश्वर में विश्वास करता हूँ जो अपने-आपको सांसारिक सुव्यवस्था के रूप में प्रकट करता है।

पाश्चात्य विद्वान् काण्ट ने कितने सुन्दर उद्गार प्रकट किए हैं—

The only two things which fill me with wonder and awe,
Are the starry heaven above and the moral Laws within.

दो बातें ऐसी हैं जो मुझे आश्चर्यचकित और भयभीत कर देती हैं—एक तारों से भरा हुआ आकाश और दूसरे नैतिक नियम।

जर्मनी का यह विद्वान् जब रात को लेटकर तारों की ओर निहारता था तो उसके मुख से अनायास उपर्युक्त शब्द निकलते थे। तारों-भरे आकाश को देखकर यह नास्तिक भी ईश्वर की सत्ता को स्वीकार करने पर विवश हो जाता था।

सन् १९२९ में लाहौर कांग्रेस में आस्तिकों की सभा में भाषण करते हुए सर पी०सी० राय ने कहा था—

"लोग कहते हैं कि वैज्ञानिक ईश्वर में विश्वास नहीं रखते। मैं संसार का माना हुआ वैज्ञानिक हूँ जैसे हाथ पर रखे हुए आँवले को देखकर इसके होने का विश्वास किया जा सकता है।"

वॉल्तेयर (Voltair) महोदय ने तो यहाँ तक कहा है—

If God did not exist it would be necessary to invent him.

अर्थात् यदि ईश्वर नहीं है तो हमें एक ईश्वर का आविष्कार करना होगा।

ईश्वर है।[१] अपने जीवन को शुद्ध एवं पवित्र बनाने के लिए प्रतिदिन ईश्वरोपासना करें।

सन्ध्या में प्राणायाम भी करना होता है। अतः यहाँ प्राणायाम की विधि का उल्लेख किया जाता है।

चौकड़ी लगाकर बैठ जाइए। दोनों पैरों के घुटने भूमि पर लगे हुए हों। सिर, गर्दन और रीढ़ की हड्डी–तीनों एक सीधी रेखा में हों। दोनों हाथों को दोनों घुटनों पर टिका दें। सारा शरीर खिंचा हुआ हो। छाती तनी हुई और आगे की ओर उभरी हुई हो। ठोड़ी का झुकाव छाती की ओर हो।

इस प्रकार आसन में बैठकर जैसे अत्यन्त वेग से वमन होता है और सारा अन्न–जल बाहर निकल जाता है, उसी प्रकार श्वास को बलपूर्वक बाहर फेंकना चाहिए। एक ही बार में सारा श्वास बाहर निकल जाना चाहिए, झटके दे–देकर नहीं। श्वास को यथाशक्ति बाहर ही रोको। जब घबराहट हो, तब धीरे–धीरे श्वास अन्दर भर लो; परन्तु अन्दर रोकना नहीं चाहिए। यह एक प्राणायाम हुआ। इसी प्रकार न्यून–से–न्यून तीन प्राणायाम करने चाहिए।

प्राणायाम से फेफड़ों का रक्त शुद्ध होता है। प्राणायाम करने वाले को क्षय रोग नहीं होता। प्राणायाम के गुणों का वर्णन करते हुए महर्षि मनु ने लिखा है–

दह्यन्ते ध्मायमानानां धातूनां हि यथा मलाः।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात्॥

(मनु० ६।१७)

जिस प्रकार धातुओं को अग्नि में रखने से उनके

---

१. इस विषय के लिए पढ़िये लेखक का ट्रेक्ट 'नास्तिकों को सन्देश'।

मल दूर हो जाते हैं, इसी प्रकार प्राणायाम के द्वारा इन्द्रियों के समस्त दोष नष्ट हो जाते हैं।

प्राणायाम से शरीर का विकास होता है। फेफड़ों को बल मिलता है। मानसिक शक्ति बढ़ती है, बुद्धि तीव्र होती है। महर्षि दयानन्द के शब्दों में–

"प्राण अपने वश में होने से मन और इन्द्रिय भी स्वाधीन होते हैं। बल-पुरुषार्थ बढ़कर बुद्धि तीव्र सूक्ष्मरूप हो जाती है कि जो बहुत कठिन और सूक्ष्म विषय को भी शीघ्र ग्रहण करती है। इससे मनुष्य शरीर में वीर्य वृद्धि को प्राप्त होकर स्थिर बल, पराक्रम, जितेन्द्रियता होती है जिससे सब शास्त्रों को थोड़े ही काल में समझकर उपस्थित कर लेगा।" (सत्यार्थप्रकाश, तृतीय समुल्लास)

व्यायाम

जीवन-रक्षा के लिए जिस प्रकार भोजन परमावश्यक है, उसी प्रकार व्यायाम को हम स्वास्थ्य-संजीवनी कह सकते हैं। चाबी के बिना घड़ी नहीं चल सकती और बिना व्यायाम के शरीर भी नहीं चलता। व्यायाम कामधेनु तथा कल्पवृक्ष के समान फल देने वाला है। महर्षि चरक ने व्यायाम के गुणों का वर्णन करते हुए लिखा है–

लाघवं कर्मसामर्थ्यं स्थैर्यं क्लेशसहिष्णुता।
दोषक्षयोऽग्निवृद्धिश्च व्यायामादुपजायते॥

(चरक सूत्र० ७।३२)

व्यायाम से शरीर में हल्कापन, कर्म करने का सामर्थ्य, स्थिरता और क्लेश सहने की शक्ति बढ़ती है; शरीर के दोषों का नाश होता है और जठराग्नि की वृद्धि होती है।

'भावप्रकाश' में कहा है–

व्यायाम दृढगात्रस्य व्याधिर्नास्ति कदाचन।
विरुद्धं वा विदग्धं वा भुक्तं शीघ्रं विपच्यते॥

व्यायाम के द्वारा शरीर के सुदृढ़ होने से कोई रोग नहीं होता। शरीर रोग-प्रूफ (Disease-proof) बन जाता है। व्यायामी मनुष्य को विरुद्ध अन्न, अर्थात् अच्छी प्रकार से न पचने वाला अन्न भी शीघ्र पच जाता है।

महर्षि सुश्रुत ने व्यायाम की प्रशंसा निम्न शब्दों में की है–

"व्यायाम करने से गर्मी, सर्दी, थकावट और प्यास आदि सहन करने की शक्ति उत्पन्न होती है। व्यायामी व्यक्ति स्वस्थ्य रहता है। मोटापे के नाश के लिए व्यायाम के समान कोई दूसरा उपाय नहीं है। मोटा व्यक्ति व्यायाम से हल्का और सुडौल हो जाता है। व्यायाम करने वाले बलशाली मनुष्य को डर के कारण शत्रु भी दुःख नहीं दे सकते। व्यायामी के ऊपर बुढ़ापा भी सहसा आक्रमण नहीं करता। उसके शरीर का मांस कड़ा और दृढ़ हो जाता है।"

व्यायाम करने से शरीर की कान्ति बढ़ती है। सब अंगों का गठन सुन्दर हो जाता है। आलस्य पास नहीं फटकता। कष्टों को सहने की शक्ति और आरोग्यता प्राप्त होती है।

डॉ० के०पी० ने व्यायाम की प्रशंसा में कहा है–

By exercise our muscles are energized,
Brain is strengthened and nerves are vitalized.
By exercise the lungs are made strong,
Blood is purified and the life becomes long.

अर्थात् व्यायाम से पुट्ठों को शक्ति मिलती है। मस्तिष्क बलवान् होता है। नाड़ियों को नव-जीवन

प्राप्त होता है। फेफड़े दृढ़ बनते हैं। रक्त शुद्ध होता है और आयु दीर्घ होती है।

सन्ध्या के पश्चात् खुली हवा में व्यायाम करना चाहिए। विद्यार्थियों के लिए दौड़ और यौगिक व्यायाम= योगासन परमोपयोगी और विशेष लाभकारी है। शहर के विद्यार्थी, जिन्हें दौड़ के लिए स्थान न मिले, वे आसनों का ही अभ्यास करें। खुला स्थान न हो तो कमरे में ही आसन कर सकते हैं।

यौगिक व्यायाम में दुहरा लाभ है। एक ओर आसनों से शरीर बलिष्ठ और रोगरहित बनता है तो दूसरी ओर आत्मिक उन्नति भी होती है। कुछ समय तक नियमित रूप से यौगिक व्यायाम का अभ्यास करने से मस्तिष्क की धारणा शक्ति बढ़ जाती है। स्नायु सतेज और मांसपेशियाँ सबल होती हैं। कब्ज, बहुमूत्र आदि रोग दूर होते हैं। शक्ति का ह्रास रुककर शक्ति की वृद्धि होने लगती है। शरीर रोगमुक्त होकर यौवन और कान्ति बढ़ती है। स्वास्थ्य और ओज की वृद्धि होकर दीर्घायु की प्राप्ति होती है। शरीर के वे असाध्य रोग, जो सहस्त्रों रुपये खर्च करने पर भी ठीक नहीं होते, एक साधारण आसन के अभ्यास से कुछ ही दिनों में ठीक होते देखे गए हैं। नीरोग और स्वस्थ रहने के लिए यहाँ कुछ आसनों का उल्लेख किया गया है।

सर्वांगासन

योगासनों में इस आसन का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यदि शीर्षासन समस्त आसनों का राजा है तो इसे समस्त आसनों की माता कहा जा सकता है। वस्तुतः यह शीर्षासन का ही एक रूप है। प्राचीन और अर्वाचीन सभी व्यायाम-शास्त्रियों ने इसकी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा

लेखकों, शिक्षकों एवं क्लर्कों को इस आसन का अभ्यास कर इससे लाभ उठाना चाहिए।

आसनों के पश्चात् पूर्व की ओर मुख करके खड़े हो जाइए और इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए परम प्रभु से प्रार्थना कीजिए—

ओ३म् तेजोऽसि तेजो मयि धेहि, वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि,
बलमसि बलं मयि धेहि, ओजोऽसि ओजो मयि धेहि,
मन्युरसि मन्युं मयि धेहि, सहोऽसि सहो मयि धेहि॥

(यजुः० १९।९)

परमपिता परमात्मन्! आप तेजस्वरूप हैं, मुझमें भी तेज का आधान कीजिए; आप पराक्रमशाली हैं, मुझे भी पराक्रमी बनाइए; आप बलवान् हैं, मुझे भी बलयुक्त कीजिए; आप ओजस्वी हैं, मुझमें भी ओज उत्पन्न कीजिए; आप दुष्टों पर क्रोध धारण करने वाले हैं, मुझे भी दुष्टों को दमन करने की शक्ति और सामर्थ्य प्रदान कीजिए; आप सहनशील हैं, मुझे भी सहनशील बनाइए।

इस मन्त्र का उच्चारण करते हुए ऐसा अनुभव कीजिए कि आपके शरीर में तेज, ओज, बल पराक्रम, सहनशक्ति आदि दिव्य गुणों का संचार हो रहा है।

व्यायाम वह दिव्य रसायन है जिससे दुर्बल व्यक्ति भी पहलवान बन सकता है। व्यायाम से क्षय का रोगी भी अपने रोग को दूर भगाकर हृष्ट-पुष्ट एवं बलिष्ठ बन सकता है। कोष्ठबद्धता को दूर करने के लिए व्यायाम से बढ़कर कोई दवा नहीं है। व्यायाम कीजिए परन्तु व्यायाम को भार समझकर मत कीजिए अपितु रुचिपूर्वक कीजिए। व्यायाम करते समय ऐसा अनुभव कीजिए कि मेरे शरीर में नवजीवन, शक्ति और स्फूर्ति का संचार हो रहा है।

व्यायाम कीजिए क्योंकि–

औषध नहीं व्यायाम समाना।
व्यय नहीं तनिक 'रु लाभ महाना॥

आरल डरबी के इन शब्दों को सदा स्मरण रखिए– "जो लोग व्यायाम के लिए समय नहीं निकाल सकते, उन्हें बीमारी के लिए समय देना होगा।"

व्यायाम के सम्बन्ध में निम्न बातों को सदा स्मरण रखना चाहिए–

१. व्यायाम सदा खुले स्थान में ही करना ठीक होता है, परन्तु वह स्थान स्वच्छ एवं शुद्ध होना चाहिए। बगीचा या छत उत्तम रहती है। हवादार कमरे में भी व्यायाम किया जाए तो कोई हानि नहीं है।

२. व्यायाम प्रतिदिन नियत समय पर और नियमानुसार करना चाहिए।

अनियमित रूप से व्यायाम करना बहुत हानिकारक है। एक पुरानी कहावत भी है–

दूसरे चौथे कसरत करे, दैव न मारे आप ही मरे।

३. भोजन करने से शीघ्र पूर्व या शीघ्र पश्चात् व्यायाम नहीं करना चाहिए।

४. व्यायाम के पश्चात् लघुशंका अवश्य कर लें, इससे शरीर की गर्मी निकल जाती है।

५. गर्मियों में व्यायाम के पश्चात् प्यास लगती है, परन्तु व्यायाम करते ही पानी नहीं पीना चाहिए। व्यायाम से कम-से-कम आधा घण्टा पश्चात् दूध अथवा बादाम रगड़कर पीने चाहिए।

६. व्यायाम के अभ्यास से भूख बढ़ती है, ऐसी अवस्था में एकदम आहार बढ़ाने से हानि हो जाती है।

भोजन हल्का और सुपाच्य करें। तैल, मिर्च, गुड़, खटाई, प्याज, लहसुन, मांस, मदिरा, चाय आदि मादक पदार्थों का सेवन न करें। दूध और घी अवश्य लें, परन्तु आवश्यकता से अधिक नहीं। पौष्टिक पदार्थों के अभाव में रात्रि में चने भिगो दें और प्रातः व्यायाम आदि से निवृत्त होकर इन भीगे हुए चनों को कच्चा ही चबाएँ, अतीव लाभकारी एवं गुणकारी हैं।

जिन्हें पौष्टिक पदार्थ मिल सकते हैं और घी-दूध का प्रबन्ध है, उनके लिए बुद्धि को प्रखर करने का एक अति-उपयोगी योग यहाँ दे रहा हूँ, बनाकर सेवन करें और लाभ उठावें; इसके बनाने में खर्च तो बहुत ही कम होगा, परन्तु लाभ बहुत अधिक होगा। योग यह है-

गिलोय, औधा, बायबिडंग, शंखाहूली, हरड़ छोटी, कूट-मीठा और शतावर-सब बराबर-बराबर ले लें। कूट-पीसकर सबके बराबर मिश्री मिला लें। बस, औषधि तैयार है। प्रतिदिन छः माशा गोघृत में मिलाकर चाटें। गो-दुग्ध ही पिएँ। बुद्धि बढ़ाने के लिए सर्वश्रेष्ठ योग है।

आँवले का मुरब्बा भी अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुआ है। व्यायाम आदि से निवृत्त होकर प्रतिदिन प्रातः एक आँवले का सेवन करने से शरीर की बढ़ी हुई गर्मी निकल जाती है, स्वप्न-दोष होना बन्द हो जाता है। मुखमण्डल पर कान्ति आने लगती है। सिर के बाल काले रहते हैं। नेत्र-ज्योति बढ़ती है और स्मरण-शक्ति तीव्र होती है।

बादाम का सेवन भी बहुत लाभदायक है। गर्मियों में रात्रि को ७ गिरियाँ पानी में भिगो दें और प्रातः आसन आदि के पश्चात अच्छी प्रकार चबा-चबाकर खाइए। सर्दियों में बिना भिगोए ही सेवन कीजिए।

स्वाध्याय

मनुष्य-जीवन के चरम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए क्रान्तदर्शी ऋषियों और महर्षियों ने, त्यागियों और तपस्वियों ने, दार्शनिकों और मनीषियों ने सम्यग्ज्ञान को ही परम साधन बताया है।

यजुर्वेद में बताया है—

विद्ययाऽमृतमश्नुते। (यजु:० ४०।१४)

ज्ञान से ही मोक्ष मिलता है और मोक्ष ही मानव-जीवन का परम-लक्ष्य और चरम-उद्देश्य है।

चरम-उद्देश्य की प्राप्ति के लिए प्राचीन ऋषि-मुनियों ने स्वाध्याय पर बड़ा बल दिया है। प्राचीन समय में जब दो व्यक्ति परस्पर मिलते थे तो कुशल-मंगल पूछने के साथ यह भी अवश्य पूछते थे—"आपका स्वाध्याय तो ठीक चल रहा है न?" स्वाध्याय एक बहुत बड़ा तप है। स्वाध्याय से सदाचार की प्रेरणा मिलती है। वैसे तो स्वाध्याय सभी आश्रमों के लिए आवश्यक है परन्तु ब्रह्मचर्याश्रम में, अध्ययन-काल में तो प्रधान कार्य स्वाध्याय ही है।

परन्तु स्वाध्याय का अर्थ समाचार-पत्र पढ़ना, अश्लील किस्से-कहानियाँ और नाविल पढ़ना नहीं है। स्वाध्याय से तात्पर्य है धार्मिक ग्रन्थों का स्वाध्याय। आप वेदों का स्वाध्याय कीजिए, मनुस्मृति पढ़िए। रामायण, महाभारत तथा दर्शनों का स्वाध्याय कीजिए। महर्षि दयानन्द द्वारा लिखित 'सत्यार्थप्रकाश', 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' और 'संस्कार विधि' आदि ग्रन्थों को पढ़िए। अपने पाठ्यक्रम के अतिरिक्त भी खूब स्वाध्याय कीजिए। पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी, एम०ए० जब दशम श्रेणी में थे तो उन्होंने तभी बहुत-से बड़े-बड़े

ग्रन्थों को पढ़ डाला था। लोग तो पुस्तकें पढ़ते हैं परन्तु वे पुस्तकालयों को पढ़ा करते थे। वे किसी भी पुस्तकालय की पहली पुस्तक से आरम्भ करके अन्तिम पुस्तक तक पढ़ा करते थे। आप भी अपने पुस्तकालयों का लाभ उठाइए और खूब स्वाध्याय कीजिए। इससे आपके ज्ञान में वृद्धि होगी।

यदि आप नियमपूर्वक १५ मिनट भी प्रतिदिन स्वाध्याय करें तो आपको महान् लाभ होगा। यदि १५ मिनट में आप पुस्तक के ५ पृष्ठ भी पढ़ें तो एक मास में १५० पृष्ठ बनते हैं। इस प्रकार आप वर्ष-भर में डेढ़-डेढ़ सौ पृष्ठों के १२ ग्रन्थ समाप्त कर सकते हैं। तनिक सोचिए, इससे आपके ज्ञान में कितनी वृद्धि होगी! अतः आज से ही स्वाध्याय आरम्भ कर दीजिए और अपने जीवन का आदर्श बना लीजिए—

स्वाध्यायान्न प्रमदितव्यम्।

अर्थात् स्वाध्याय में प्रमाद नहीं करना चाहिए।

स्कूल का अवकाश हो सकता है, भोजन की छुट्टी हो सकती है, परन्तु स्वाध्याय की छुट्टी नहीं होनी चाहिए। स्वाध्याय तो यावत्-जीवन श्वास-प्रश्वास की भांति चलता ही रहना चाहिए।

संसार में जितने भी बड़े-बड़े वैज्ञानिक, आविष्कारक, दार्शनिक, सुधारक और महापुरुष हुए हैं, वे सब स्वाध्याय के प्रभाव से ही हुए थे। स्वाध्याय से पशुतुल्य मनुष्य सच्चे अर्थों में मनुष्य बन जाता है, मनुष्य से महापुरुष और देवता तक बन जाता है और स्वाध्यायहीन मनुष्य चतुष्पाद पशु ही हो जाता है। स्वाध्याय द्वारा अल्पशिक्षित मनुष्य भी बड़े धुरन्धर विद्वान होते देखे गए हैं। स्वाध्याय के द्वारा आन्तरिक ज्ञान-ज्योति प्रदीप्त होती है।

हाँ, एक बात का अवश्य ध्यान रखिए। स्वाध्याय कीजिए तो अपने आचरण को भरी तदनुकूल बनाइए। आचार विचार से रहित मानव पशु के समान है। ऐसे व्यक्ति का कल्याण नहीं हो सकता–

आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः।

–देवी०भा० २।११।१।

आचारहीन को वेद भी पवित्र नहीं कर सकते।

शास्त्रकारों ने स्वाध्याय की बहुत प्रशंसा की है। मनुष्य की उन्नति में स्वाध्याय प्रमुख साधन है।

संसार में जितने श्रम=प्रयत्न हैं, उन सबमें स्वाध्याय सर्वश्रेष्ठ है क्योंकि स्वाध्याय के द्वारा ही मनुष्य ज्ञान की चरम सीमा तक पहुँच सकता है। इसके द्वारा ही वह ब्रह्मानन्द को प्राप्त कर सकता है। स्वाध्याय के द्वारा वह इस लोक में प्रतिष्ठा, यश, कीर्ति और गौरव को प्राप्त कर परलोक में अमर पद को पा सकता है, अतः–

स्वाध्यायान्मा प्रमदः।

स्वाध्याय में कभी प्रमाद मत कीजिए। अपने जीवन को सफल, महान् और उन्नतिशील बनाने के लिए प्रतिदिन स्वाध्याय कीजिए।

भोजन

भोजन के सम्बन्ध में कितना सुन्दर कहा गया है–

प्राण प्राणभृतामन्नं तदयुक्त्वा हिनस्त्यसून्।

प्राणियों के लिए अन्न अमृत है, परन्तु वही अन्न अयुक्तिपूर्वक सेवन किया जाए तो विष बन जाता है। अतः स्वस्थ्य रहने के लिए भोजन का ज्ञान आवश्यक है। भोजन के सम्बन्ध में मुख्यतः पांच बातों पर ध्यान देना चाहिए–

(१) क्या खाएँ?—एक वाक्य में इसका उत्तर यह दिया जा सकता है 'हिताशी स्यात्'—मनुष्य को हितकर पदार्थों का सेवन करना चाहिए। भोज्य पदार्थों को चार भागों में विभक्त किया जा सकता है—

(क) कुछ वस्तुएँ ऐसी होती हैं जिन्हें विष के समान सर्वथा त्याग देना चाहिए। वे वस्तुतः विष हैं। कोई भी सभ्य देश उनका निर्माण नहीं करता। ऐसी वस्तुएँ हैं अफीम, कोकीन, गाँजा, चरस, तम्बाकू और मद्य। इनके प्रयोग से शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आत्मिक शक्ति क्षीण होती है।

(ख) कुछ ऐसे हानिकर द्रव्य हैं जिन्हें बुद्धिमान् लोगों को सेवन नहीं करना चाहिए। यदि आपने उनके सेवन करने की आदत डाल ली है तो उनके प्रयोग को शीघ्र छोड़ दो। ऐसी वस्तुएँ हैं शराब, चाय, कॉफी, काको, पान, तम्बाकू और मांस आदि।

विद्यार्थियों और ब्रह्मचारियों को मिर्च, गुड़, तैल, खटाई, लहसुन, प्याज और मांस आदि का सेवन कदापि नहीं करना चाहिए। ये कामोत्तेजक हैं। इनका सेवन करने से बुद्धि बिगड़ती है। सोडा, लैमन, बर्फ, चाय, कॉफी, कहवा इनका प्रयोग भी मत करो! अण्डे, मांस और मछली मनुष्य का भोजन नहीं, पशुओं का भोजन है। इनसे पृथक् रहो! मनु जी ने भी कहा है, **"वर्जयेन्मधु मांसं च"** (२।१७७)—शराब और मांस छोड़ देना चाहिए। सिगरेट, तम्बाकू, भंग, चरस, गाँजा, अफीम आदि का भूलकर भी सेवन मत करो। यदि सिगरेट आदि पीते हो तो आज ही छोड़ दो! शंकर प्रसाद भट्ट के शब्दों में—

हे सभ्य जेण्टिलमैन लोगो! छोड़ दो तुम बीड़ियाँ।
जानो न इनको बीड़ियाँ, ये मृत्यु की हैं सीढ़ियाँ।।

बर्नर मेकफेडन महोदय का कथन है–

"धूम्रपान मानसिक कार्य-क्षमता को कम करता है, विशेषकर विद्यार्थियों में। यह जीवन को नष्ट करने वाला दोष है। तम्बाकू और विशेषकर सिगरेटों का सेवन एक प्रकार का विष है जो मस्तिष्क, हृदय, ज्ञानतन्तुओं और गुर्दों पर बुरा प्रभाव डालता है।"

प्रसिद्ध आविष्कारक एडिसन महोदय ने एक बार लिखा था–"मैं ऐसे किसी व्यक्ति को नौकर नहीं रखता जो धूम्रपान करता हो।"

एस० किनिप महोदय का कथन है–

"कॉफी का सेवन सम्पूर्ण शरीर-संगठन तथा नाड़ी-मण्डल को छिन्न-भिन्न कर देता है। इसके सेवन से उदासीनता, कमजोरी और चिन्ता आदि उत्पन्न होती हैं। यदि स्त्रियाँ इसका पान करें तो उन्हें 'मनुष्य-भक्षक' की संज्ञा दी जा सकती है। लगभग यही बात चाय और चॉकलेट के सम्बन्ध में कही जा सकती है।"

कुछ लोग चाय के दास होते हैं। वे प्रातः दोपहर और सायं चाय अवश्य पीते हैं। वे चाय के बिना रह नहीं सकते और न कोई कार्य ही कर सकते हैं। यह बहुत बुरी आदत है और शीघ्र छोड़ देनी चाहिए।

आज मांस का प्रचार बढ़ रहा है। यह मनुष्य का भोजन नहीं है। भारतीय और पाश्चात्य सभी विद्वानों ने इसकी निन्दा की है।

स्वामी विवेकानन्द कहते हैं–

"मांस खाना असभ्यता है; धार्मिक जीवन के लिए निरामिष भोजन ही ठीक है।"

मेकफेडन महोदय ने मांस-भक्षण के विरुद्ध आठ आक्षेप किए हैं। हम उनमें से तीन को संक्षेप में यहाँ

उद्धृत करते हैं–

First—It is a stimulating diet.

प्रथम–मांस–भक्षण कामवृत्ति को उत्तेजित करता है।

Second—It lessens endurance.

द्वितीय–यह सहनशीलता को समाप्त करता है।

Third—It shortens life.

तृतीय–यह आयु को कम करता है।

डॉ० हैग महोदय लिखते हैं–

मांस–भक्षण सुस्ती लाता है, क्योंकि इसके सेवन से मस्तिष्क, मांसपेशियों, हड्डियों तथा सारे शरीर में रक्त का प्रवाह मन्द तथा न्यून हो जाता है। रक्त–प्रवाह की यह मन्दता और न्यूनता यदि जारी रहे तो परिणाम में स्वार्थपरायणता, लोलुपता, भीरुता, अधःपतन, ह्रास और अन्त में विनाश निश्चित है। (Diet and Food, पृष्ठ १२९)

मांसाहार तामसिक भोजन है। मांसाहारी व्यक्ति में क्रूरता, क्रोधादि पाशविक वृत्तियाँ स्थान कर लेती हैं। कामवासना उत्तेजित होती है। व्यभिचार करने और मदिरा पीने की इच्छा होती है। मांस खाकर सदाचारी रहना असम्भव है। अतः मांस का सेवन कदापि नहीं करना चाहिए।

कुछ लोगों का ऐसा विचार है कि अण्डे खाने में कोई दोष नहीं है। परन्तु अण्डों का सेवन मांस की अपेक्षा अधिक बुरा है। लीजिए, आर्नल्ड एहरट के शब्दों में पढ़िए–

"Eggs are even worse than meats, because not only eggs have too high protein qualities, but they contain a gluey property much worse

than meat and are therefore very constipating, quite more so than meat."

अर्थात् अण्डे मांस की अपेक्षा अधिक दोषयुक्त होते हैं क्योंकि न सिर्फ उनमें अधिक मात्रा में प्रोटीन होता है, अपितु उनमें एक ऐसा पदार्थ पाया जाता है जो बहुत ही चिपचिपा होता है और जिसे खाने के पश्चात कब्ज हो जाती है।

(ग) कुछ वस्तुएँ लाभदायक होती हैं और जीवन के लिए आवश्यक हैं, परन्तु उनका प्रयोग परिमित मात्रा में करें। इनमें मक्का, बाजरा, गेहूँ, चावल, पनीर, मक्खन, क्रीम और दालें आदि सम्मिलित हैं।

(घ) कुछ वस्तुएँ लाभदायक होती हैं और पर्याप्त मात्रा में ली जा सकती हैं। इनमें दूध, दही, सभी प्रकार के फल, अंगूर, अंजीर, केला, टमाटर, सन्तरा, सेब, नाशपाती, साग-पात, मूली, गाजर आदि पदार्थ सम्मिलित हैं।

फलों की प्रशंसा करते हुए किसी ने ठीक ही कहा है–

"They are nature's own ready-made delicacies, prepared in the kitchen of the city of the sun."

अर्थात् फल प्रकृति द्वारा सूर्य की रसोई में तैयार किए हुए स्वनिर्मित स्वादिष्ट भोजन हैं।

हाँ, एक बात ध्यान में रखनी चाहिए। फल वृक्ष पर ही पके होने चाहिए। प्रतिदिन पर्याप्त मात्रा में हरी सब्जियों का सेवन कीजिए और सदा जवान रहिए। प्रतिदिन १४ गाजरों के रस का प्रयोग कीजिए और फिर उसका परिणाम देखिए।

सदा शुद्ध, सात्विक, सादा एवं ताजा भोजन करना चाहिए। राजसिक और तामसिक भोजन नहीं करना चाहिए। सबसे श्रेष्ठ भोजन **"क्षीर-घृताभ्यासो रसायनानां**

श्रेष्ठतमः" दूध और घी का सेवन है। अन्नों में जौ सर्वश्रेष्ठ और सात्विक है। इसके सेवन से मधुमेह नहीं होता।

सदा हितकारी पदार्थों का ही सेवन कीजिए। जो पदार्थ शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा के लिए हितकर हैं, उन्हें ही खाइए। चटनी, आमपापड़, आइसक्रीम और गोलगप्पे खा-खाकर अपने शरीर का नाश मत करो।

(२) कितना खाएँ?—अब तक हमने "क्या खाएँ" के सम्बन्ध में लिखा। अब हम भोजन के सम्बन्ध में दूसरे प्रश्न को लेते हैं "कितना खाएँ?" इसका उत्तर है **"मिताशी स्यात्।"** थोड़ी मात्रा में खाइए। खाद्य पदार्थ चाहे कितने ही पौष्टिक और स्वास्थ्यवर्धक हों, यदि उनका सेवन उचित और परिमित मात्रा में नहीं किया जाता तो वे हानिकारक सिद्ध होते हैं।

शैख सदी ने एक स्थान पर लिखा है—

"इतना अधिक मत खाओ कि वह आपके मुँह से बाहर आ जाए और इतना कम भी मत खाओ कि आत्मा भूखी मर जाए।"

बहुत अधिक भोजन से मनुष्य शीघ्र मर जाता है। किसी अनुभवी ने ठीक ही कहा है—

"The more you eat, the sooner you die." अर्थात् मनुष्य जितना अधिक खाता है उतनी ही जल्दी मरता है।

मित भोजन से मनुष्य किस प्रकार अपने खाए हुए स्वास्थ्य को प्राप्त कर नीरोग एवं स्वस्थ रह सकता है, इस विषय में इटली के लूईमो कारनेरो के जीवन को सदा स्मरण रखो। उसने अपने भोजन को कम करके पुनः अपने खाए हुए स्वास्थ्य को प्राप्त कर लिया था और १०४ वर्ष की आयु पाकर मरा। ३५ और ४० वर्ष की अवस्था में अपने-आपको दुःखी पाकर उसने

अल्पाहारी जीवन व्यतीत करने का निश्चय किया और ८६ वर्ष की अवस्था में उसने अपने-आपको पूर्ण स्वस्थ पाया। वह सब मिलाकर केवल १२ औंस भोजन करता था; न कम न अधिक। १४ औंस पानी पीता था। इस संयमित एवं नियमित जीवन से वह एक ही वर्ष में उन सब व्याधियों से मुक्त हो गया जिन्होंने उसके जीवन में गहरी जड़ें जमा रखी थीं।

किसी भोजन-अनुभवी ने ठीक ही लिखा है कि हम जितना आवश्यकता से अधिक भोजन करते हैं उसमें से-

"One-third nourishes our body and two-third nourishes the doctors."

अर्थात् एक-तिहाई हमारे शरीर का पोषण करता है और दो-तिहाई डॉक्टरों का पोषण करता है।

मित भोजन कीजिए! थोड़ी मात्रा में खाइए! हितकर पदार्थों को भी कण्ठ तक ठूँस-ठूँसकर मत भरिए! अधिक खाने से आलस्य आता है, आयु घटती है और ब्रह्मचर्य का नाश होता है।

(३) कब खाएँ?-सीधा और स्पष्ट उत्तर है जब भूख लगी हुई हो। कालभोजी बनें। समय पर भोजन करें। हर समय बकरी की भांति मुख न चलाते रहें। हर समय खाते रहना स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत हानिकारक हैं। किसी ने ठीक ही कहा है-

खावे बकरी की तरह। सूखे लकड़ी की तरह॥

जब भूख खूब लगे, उसी समय भोजन करना चाहिए। भूख लगने पर सूखी रोटियों में जो आनन्द आता है, वह पेट भरे होने पर खीर, हलवा और पूरी में भी नहीं आता। हाली साहब ने ठीक लिखा है-

खाने तो बहुत मुयस्सर[१] आए हैं हमें।
जो देख के चख के भाए हैं हमें।।
सबसे लजीज[२] थे वो खाने ए भूख।
जो तूने कभी-कभी खिलाए हैं हमें।।

भोजन दो ही समय करना चाहिए—

नान्तरा भोजनं कुर्यादग्निहोत्रसमो विधि।

(भावप्रकाश ५।११६)

अग्निहोत्र की भांति दो ही समय भोजन करना चाहिए। पहला लगभग १२ बजे और दूसरा सायंकाल छः और सात बजे के मध्य में।

दोनों भोजनों के मध्य दूध, लस्सी, शर्बत आदि पेय पदार्थों का निषेध नहीं है।

(४) क्यों खाएँ?—हम भोजन क्यों खाएँ? शैख सादी ने इस प्रश्न का उत्तर भी बहुत ही सुन्दर ढंग से दिया है—

खुर्दन बराये जीस्तन वो जिक्र कर्दन अस्त।
तो दानी कि जीस्तन बराय खुर्दन अस्त।।

भाव यह है—भोजन करने का वास्तविक प्रयोजन यह है कि मनुष्य जीवित रहता हुआ परमात्मा के भजन से अपना जीवन सफल करे, परन्तु लोग मूर्खतावश यह समझते हैं कि मनुष्य जीवन केवल खाने-पीने के लिए मिला हुआ है।

यह अमूल्य मानव-जीवन खाने-पीने और भोग-विलास के लिए नहीं मिला। भोजन करने का उद्देश्य है अपने शरीर को स्वस्थ, निरोग और बलवान् बनाना। परिमित मात्रा में खाया हुआ भोजन ही हमें आरोग्य प्रदान कर सकता है। बुद्धिमानों का कथन है—

---

१. प्राप्त होना २. स्वादिष्ट।

"Eat to live, do not live to eat."

जीने के लिए खाओ! खाने के लिए मत जियो! स्वाद के लिए मत खाओ!

(५) **कैसे खाएँ?**—इस प्रकार खाओ कि भोजन को पचाने में जठराग्नि को कम-से-कम श्रम करना पड़े। यह तभी सम्भव है जब भोजन को खूब चबाकर खाया जाए हमारे मुँह में ३२ दाँत होते हैं, अतः प्रत्येक ग्रास को ३२ बार तो चबाना ही चाहिए। भोजन को इतना चबाना चाहिए कि चबाते-चबाते वह दूध की भांति पतला हो ज़ाए; तभी उसका घूँट गले से नीचे उतारना चाहिए।

जब भोजन की थाली आपके सामने आए तो उसे देखकर नाक-भौं मत सिकोड़िए। भोजन की निन्दा करने से उत्तम-से-उत्तम अन्न भी अंग नहीं लगता। अतः—

पूजयेदशनं नित्यमद्याच्चैतदकुत्सयन्।
दृष्ट्वा हृष्येत्प्रसीदेच्च प्रतिनन्देच्च सर्वशः॥

(मनु० २।५४)

नित्य भोजन का पूजन करना चाहिए और बिना निन्दा किए खाना चाहिए। भोजन को देखकर हर्षित होना चाहिए और प्रसन्नतापूर्वक उसका अभिनन्दन करना चाहिए।

श्री हरदयाल, एम०ए० ने लिखा है—

"Cheerfulness should also be a guest at meals."

अर्थात् भोजन के समय प्रसन्नता भी हमारा अतिथि होना चाहिए।

भोजन के साथ जल पीने के सम्बन्ध में आयुर्वेद के ग्रन्थों में लिखा है—

अत्यम्बुपानान्न विपच्यतेऽन्नमनम्बुपानाच्च स एव दोषः।
तक्ष्मान्नरो वह्निविवर्धनाय मुहुर्मुहुर्वारिपिबेदभूरि॥

(भावप्रकाश)

भोजन करते हुए बहुत अधिक जल पीने से अन्न नहीं पचता और बिल्कुल जल न पीने से भी भोजन का ठीक पाक नहीं होता। जठराग्नि को प्रदीप्त रखने के लिए मनुष्य को बार-बार थोड़ा-थोड़ा जल पीना चाहिए।

डॉ० मैंकल महोदय लिखते हैं–

"Drinking of much water at meals hinders digestion, but a small quantity of water taken in sips during a meal is helpful."

अर्थात् भोजन के समय बहुत पानी पीना हानिकारक है, परन्तु बिल्कुल पानी न पीना भी हानिकारक है। घूँट-घूँट करके भोजन के बीच पानी पीना लाभदायक है।

अपना जूठा भोजन किसी को नहीं देना चाहिए और न किसी का जूठा भोजन स्वयं खाना चाहिए। महर्षि मनु ने लिखा है–

नोच्छिष्टं कस्यचिद्दद्यान्नाद्याच्चैव तथान्तरा।
न चैवात्यशनं कुर्यान्न चोच्छिष्टःक्वचिद् व्रजेत्॥

(मनु० २।५६)

अपना जूठा भोजन किसी को न दें। दोपहर और सायं के भोजन के मध्य में कुछ न खाएँ। इन दो बार में भी अधिक भोजन न करें और कुल्ला आदि किए बिना कहीं न जाएँ।

पाश्चात्य विदुषी मिस हेलन ने यन्त्रों के द्वारा स्पष्ट प्रमाणित किया है कि हाथ के हाथ से स्पर्श होने पर भी रोग के बीज एक से दूसरे में चले जाते हैं। फिर भोजन के द्वारा जाने में तो सन्देह ही क्या?

भोजन-विषयक कुछ अन्य बातें–

भोजन-स्थान अत्यन्त स्वच्छ, उज्ज्वल, हवादार एवं प्रकाश वाला होना चाहिए जिससे मक्खी-मच्छर

आदि भोजनालय में प्रविष्ट न हो सकें।

शोक, क्रोध, भय और श्रम की अवस्था में भोजन नहीं करना चाहिए। इन अवस्थाओं में खाया हुआ भोजन अत्यन्त हानिकारक होता है।

भोजन के पश्चात् कुल्ला करके मुख को अच्छी प्रकार शुद्ध कर लें। इससे मुख से दुर्गन्ध नहीं आती; दाँत दृढ़ रहते हैं।

स्वास्थ्य-रक्षा के लिए सप्ताह में एक समय निराहार रहना भी लाभकारी है। इस उपवास से अजीर्णता और पेट के अन्य विकार ठीक होते हैं।

भोजन करने के पश्चात् हाथ धोकर गीले हाथों को मुख और आँखों पर फेरें। इससे नेत्र-ज्योति बढ़ती है।

भोजन के पश्चात् लघुशंका अवश्य करें। इससे एक तो शरीर की अनावश्यक गर्मी बाहर निकल जाएगी, दूसरे मधुमेह और गुर्दे का दर्द नहीं होता।

भोजन के पश्चात् १५-२० मिनट तक पढ़ना अथवा परिश्रम का कार्य नहीं करना चाहिए। भोजन करते ही पढ़ने से आँखों की ज्योति कम होती है।

आध्यात्मिक दैनन्दिनी (डायरी)

जीवन को उन्नत बनाने के लिए और जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए आत्म-निरीक्षण की महती आवश्यकता है। आत्म-निरीक्षण के द्वारा ही आप अपने दोषों को दूर करके लौकिक और पारलौकिक सुख प्राप्त कर सकेंगे। यदि आप महान् बनना चाहते हैं, तो प्रतिदिन रात्रि में सोने से पूर्व आत्म-विश्लेषण कीजिए और अपनी आध्यात्मिक डायरी भरिए। दैनन्दिनी में प्रतिदिन यह लिखिए कि आज आपने कितनी गलतियाँ की हैं? आपने अपने भाईयों को बिना अपराध के ही कितनी बार पीटा

है? अपने सहपाठियों को कितनी बार गालियाँ दी हैं? आपने दिन-भर में कितनी युवतियों को कुदृष्टि से देखा है? इसी प्रकार अपनी डायरी में अपने शुभ कार्यों को भी अंकित कीजिए। आपने कितना दान दिया है? क्या आपने किसी असहाय की सहायता की है? क्या किसी दीन-दुखी, निर्बल की सेवा की है? इस प्रकार के कार्यों को भी डायरी में लिख लो।

अपनी प्रातः दिनचर्या के साथ संकल्प कीजिए कि—"आज मैं सत्य का पालन करूँगा, अथवा संयम और ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा अथवा किसी को गाली नहीं दूँगा।" फिर रात्रि में बैठकर विचार कीजिए कि आपने अपने व्रत का कहाँ तक पालन किया है? दूसरें दिन पुनः प्रतिज्ञा लीजिए और उस पर दृढ़तापूर्वक आचरण कीजिए। आपका जीवन उन्नति-पथ की ओर अग्रसर होगा।

यह डायरी आपका पथ-प्रदर्शन करेगी। यह डायरी आपको बुराई की ओर से हटाकर सुमार्ग की ओर चलाएगी। यह आपको ईश्वर की ओर प्रवृत्त करेगी और आपकी मनन-शक्ति का विकास करेगी। यदि आप नियमित डायरी रखेंगे तो यह विपत्ति और कष्ट में आपको धैर्य, साहस और सान्त्वना प्रदान करेगी। यह आपके मन को शान्त करेगी और आपको अध्यात्म-मार्ग में आगे बढ़ाएगी। यदि आप शीघ्र उन्नति करना चाहते हैं, यदि आप आगे बढ़ना चाहते हैं, यदि आप ऊपर उठना चाहते हैं तो आज से ही अपने दैनिक कार्यों का लेखा रखना आरम्भ कर दीजिए।

संसार के प्रायः सभी महापुरुष डायरी रखते थे। वैज्ञानिक फ्रैंकलिन का नाम तो आपने सुना होगा। वे प्रतिदिन झूठ बोलने और बुरे काम करने की संख्या को

अपनी डायरी में लिख लिया करते थे। कालान्तर में उनके सारे दोष दूर हो गए।

इसी प्रकार टाल्स्टाय को 'महात्मा टाल्स्टाय' बनाने वाली उनकी दैनन्दिनी ही थी। आरम्भ में टाल्स्टाय का जीवन बहुत ही भ्रष्ट और निरंकुश था। वे असत्य बोलते थे। शराब पीते थे, मांस खाते थे। इतना ही नहीं; इससे भी आगे बढ़े हुए थे, परन्तु दैनिक डायरी रखने से धीरे-धीरे उनके सारे व्यसन छूट गए। महात्मा गांधी भी डायरी रखते थे और विद्यार्थियों को डायरी रखने का आदेश दिया करते थे।

उन्नति के इच्छुक प्रत्येक मनुष्य को प्रतिदिन अपने जीवन का निरीक्षण करना चाहिए। कहा है—

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षेत नरश्चरितमात्मनः।
किं नु मे पशुभिस्तुल्यं किं नु सत्पुरुषैरिति।।

(सु० रत्न० १५३।२)

मनुष्य को प्रतिदिन आत्म-निरीक्षण करते हुए देखना चाहिए कि मेरी आत्मा पशुओं की आत्मा के तुल्य है या पुरुषों की आत्मा के सदृश है।

इसी स्वर में स्वर मिलाकर थोरो महोदय लिखते हैं—

"He is blessed who is assured that animal is dying out in him day by day and the divine being established."

अर्थात् वही धन्य है जिसको प्रतिदिन यह अनुभव होता जाए कि उसमें पशुता दिन-प्रतिदिन मरती जा रही है और देवत्व स्थापित होता जा रहा है।

दैनिक डायरी से आप तुरन्त ही अपनी भूल को सुधार सकते हैं और उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सकत हैं। यह डायरी आपको समय का मूल्य बताएगी।

डायरी की एक रूपरेखा इसी पृष्ठ पर दी जा रही है। आप अपनी बुद्धि और आवश्यकतां के अनुसार इसे घटा और बढ़ा भी सकते हैं।

आध्यात्मिक डायरी की रूपरेखा

सं०	प्रश्न	१	२	३	४	५	६	७	कुल योग
१	सोकर कब उठे?								
२	माता-पिता आदि को नमस्ते की या नहीं?								
३	व्यायाम कितनी देर किया?								
४	सन्ध्या की या नहीं?								
५	स्वाध्याय कितनी देर किया?								
६	किसी के साथ कोई भलाई कि या नहीं?								
७	मास में सत्संग कितनी बार किया?								
८	कितना दान दिया?								
९	कितनी बार झूठ बोला?								
१०	कितने घण्टे व्यर्थ गपशप में लगाये?								
११	कितनी बार ब्रह्मचर्य-व्रत टूटा?								
१२	किन गुणों का विकास कर रहे हो?								
१३	कितने बजे सोये?								

निद्रा

देह-स्थिति तथा शरीर-व्यापार के लिए जिस प्रकार आहार परमावश्यक है, उसी प्रकार जीवन के लिए नींद भी अपेक्षित है। इतना ही नहीं, भोजन के बिना तो मनुष्य शायद कुछ समय तक जीवित भी रह जाए, परन्तु निद्रा के बिना दो-चार दिन जीना भी कठिन होगा। शरीर की पुष्टि और कृशता, सबलता और निर्बलता, स्वास्थ्य और आरोग्य निद्रा पर ही निर्भर है। इसलिए रात को निद्रा का सेवन करना ही चाहिए।

निद्रा से हमारी इन्द्रियों की कार्यशक्ति पुनः ठीक हो जाती है। युक्ति-संगत निद्रा से सुख की प्राप्ति और आयु की वृद्धि होती है। निद्रा में सभी अंगों तथा इन्द्रियों को सुख मिलता है। शरीर के प्रायः सभी कार्य कुछ समय के लिए या तो बन्द हो जाते हैं या अपना कार्य धीरे-धीरे करने लगते हैं। उदाहरण के रूप में हृदय और नाड़ी की धड़कन धीमी हो जाती है। रक्तचाप गिर जाता है। फेफड़ों का व्यापार भी मन्द हो जाता है। शरीर का तापमान भी कम हो जाता है।

'कितनी देर सोना चाहिए' इस विषय में कुछ निश्चित नियम निर्धारित करना कठिन है। भिन्न-भिन्न अवस्था के व्यक्तियों के लिए निद्रा की मात्रा भी उनकी प्रकृति आदि के अनुसार भिन्न-भिन्न होगी। एक नवजात शिशु दिन और रात्रि में लगभग २२ घण्टे सोता है। एक अथवा दो वर्ष के बालक को १५-१६ घण्टे की निद्रा चाहिए। जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता जाता है, उसकी निद्रा का समय भी कम होता जाता है। युवकों को ६-७ घण्टे अवश्य सोना चाहिए। छोटे बच्चे ८-९ घण्टे भी सो सकते हैं। नैपोलियन चार घण्टे की निद्रा में ही विश्वास करता था। महर्षि दयानन्द दो घण्टे सोकर ही कार्य चला लेते थे। अतः नींद के लिए कोई

निश्चित समय नहीं बांधा जा सकता। पूर्ण निद्रा की कसौटी यह है कि जब मनुष्य सोकर उठे तो वह अंपने-आपको पूर्णरूपेण आनन्दित और श्रम-रहित अनुभव करे।

निद्रा के लिए निम्न नियमों को सदा ध्यान में रखें-

रात्रि के पहले भाग में अधिक गहरी निद्रा आती है। अतः ९ या १० बजे सो जाना चाहिए। किसी पाश्चात्य विद्वान् ने भी कहा है-"Early to bed and early to rise, makes a man healthy, wealthy and wise." जल्दी सोना और जल्दी उठना मनुष्य को स्वस्थ, धनवान् और बुद्धिमान् बनाता है।

सोते समय पूर्ण शान्ति और अन्धकार होना चाहिए। बिजली या गैस की चकाचौंध और कोलाहल में निद्रा ठीक नहीं आती।

सोने का कमरा खुला और हवादार होना चाहिए जिससे वायु का गमनागमन पर्याप्त मात्रा में हो सके।

ब्रह्मचारियों और विद्यार्थियों को भूमि पर अथवा तख्त पर शयन करना चाहिए। गर्मियों में बिछाने के लिए एक दरी पर्याप्त है। सर्दियों में कम्बल अथवा गद्दे का प्रयोग कर सकते हैं।

सदा अकेले सोना चाहिए। कभी भी किसी भी अवस्था में किसी के साथ नहीं सोना चाहिए।

सोने से पूर्व लघुशंका अवश्य कर लेनी चाहिए। लघुशंका के पश्चात् हाथ, पैर और मुख शीतल जल से धोकर स्वच्छ कर लें। ऐसा करने से निद्रा गहरी आती है और स्वप्नदोष नहीं होता।

बायीं अथवा दायीं करवट से सोईए। थोड़ी-बहुत देर पीठ के बल भी लेट सकते हैं, परन्तु पेट के बल तो भूलकर भी मत सोइए तथा सोते समय पैर के ऊपर पैर मत रखिए।

रात्रि में जागरण और दिन में सोना, दोनों ही वर्जित हैं। यदि विवश होकर रात्रि में जागना ही पड़े तो थोड़ी

देर दिन में विश्राम कर लेना चाहिए। ऐसा करने से मनुष्य नीरोग और प्रसन्न बना रहता है।

सोते समय सिर पूर्व या दक्षिण की ओर रहना चाहिए। सर्वोत्तम पूर्व की ओर सिर करके सोना है। आयुर्वेद के ग्रन्थों में कहा है–**"प्राक् शिरः शयीत।"** दक्षिण की ओर पैर करके कदापि नहीं सोना चाहिए, क्योंकि मनुष्य के मस्तिष्क में एक शक्ति है जिसे आंग्ल भाषा में मैगनेट (Magnet) कहते हैं। इस शक्ति का धड़कने वाला भाग मनुष्य की चोटी की ओर होता है। जब मनुष्य का सिर उत्तर की ओर होता है तो उसकी गति नियत संख्या की अपेक्षा बढ़ जाती है। फलस्वरूप नाना प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं।

सायंकाल का भोजन सोने से कम-से-कम तीन घण्टे पूर्व खा लेना चाहिए।

ग्रीष्म ऋतु में यदि थोड़ी देर दिन में भी विश्राम कर लिया जाए तो कोई हानि नहीं है।

सोते समय इस ओर भी ध्यान देना आवश्यक है कि मनुष्य का मुँह खुला न रहे। इस सम्बन्ध में किसी ने ठीक ही कहा है, "प्रभु मनुष्य के नथुनों में जीवन की श्वास फूँककर उसे जीवन प्रदान करता है, परन्तु मानव इस बात को भूलकर मुख से सांस लेता है और मर जाता है।"

मुँह ढककर, जुर्राब पहनकर और पेटी लगाकर सोना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

जब हम चिन्ताओं से मुक्त हों तभी आनन्द की नींद सोते हैं, अतः जब आप शय्या पर जाने लगें तो दुःख और चिन्ताओं को छोड़कर प्रसन्नतापूर्वक जावें और–

ओ३म् यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥

(यजुः० ३४।१)

इत्यादि[१] वेद-मन्त्रों का पाठ करते हुए और ईश्वर से अपने मन को शिव-कल्याणकारी संकल्प वाला बनाने की प्रार्थना करते हुए निद्रा देवी की गोद में चले जावें।

जीना सीखो !

पाठकवृन्द। यहाँ मनुष्य की दैनिकचर्या का विधान किया गया है। जीवन अमूल्य है। इसके एक क्षण को भी व्यर्थ न जाने दें। जीवन क्या है? एक विद्वान ने कहा है–

"Living is an art. Learn it and enjoy your life."

अर्थात् जीवन एक कला है। इसे सीखिए और अपने जीवन का आनन्द लीजिए।

यदि आप इस दिनचर्या का अभ्यास करेंगे तो निश्चित रूप से आपके जीवन में परिवर्तन आएगा। आपका जीवन विकसित और सुवासित होकर दिव्य और महान् हो उठेगा। अन्य लोग भी आपके जीवन से प्रेरणा ग्रहण करेंगे, जैसाकि कहा भी है–

"When a flower opens, the bees come to it uninvited."

अर्थात् जब पुष्प खिलता है तो मधु-मक्खियाँ बिना किसी निमन्त्रण के स्वयं आ जाती हैं।

बस, आवश्यकता इस बात की है कि आप इस दिनचर्या का अनुष्ठान आज से ही प्रारम्भ कर दें। परमपिता परमात्मा हम सबको बल और शक्ति दे कि हम इस दिनचर्या पर आचरण करते हुए भारतीय गगन-मण्डल में गौतम, कपिल, कणाद, महर्षि दयानन्द, स्वामी श्रद्धानन्द, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, रामप्रसाद बिस्मिल, चन्द्रशेखर आजाद और सरदार भगतसिंह की भांति चमकें।

---

१. ये छः मन्त्र हैं। इनके भाव भी अत्यन्त उदात्त एवं सुन्दर हैं। इनकी विस्तृत व्याख्या हम अन्य ग्रन्थ में करेंगे।